अध्याय 2

अनुवाद : स्वरूप, सिद्धांत एवं विकास-यात्रा

यह उत्तर-आधुनिक समय है। उत्तर-आधुनिकतावाद कोई एक सिद्धांत या विचारधारा नहीं है वरन् उसमें कई विचारधाराएँ और सिद्धांत एक साथ स्थान पाते हैं। उत्तर-आधुनिकता का प्रभाव मनुष्य जाति से जुड़े सभी क्षेत्रों पर देखा जा सकता है। उत्तर-आधुनिकता ने साहित्य को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। इसके साथ अनुवाद की मूल अवधारणाएँ प्रभावित हुई और परिवर्तित भी। सन् 1972 में जेम्स होम्स द्वारा प्रस्तुत 'The Name and Nature of Translation Studies' लेख से अनुवाद के उत्तर-आधुनिक अध्ययन की शुरूआत हुई। इस अध्ययन ने आगे चलकर अनुवाद को मूल का पिछलग्गु या दोयम दर्जे के स्थान से ऊपर उठाकर मूल के समस्थानीय होने का सम्मान प्रदान किया। आज अनुवाद पुनःसृजन कहा जाता है और अनुवादक सर्जक के समकक्ष स्थान का अधिकारी है।

2.1 अनुवाद का अर्थ, परिभाषा और महत्व

2.1.1 अनुवाद का अर्थ

अनुवाद से तात्पर्य है - किसी एक भाषा में कही हुई बात को दूसरी भाषा में कहना। अनुवाद एक भाषिक प्रकिया है अथवा भाषिक प्रकिया का परिणाम है, जिसमें एक भाषा (स्रोत भाषा) में अभिव्यक्त कथ्य को दूसरी भाषा (लक्ष्य भाषा) में संप्रेषित किया जाता है।

'अनुवाद' शब्द 'वद्' धातु में 'अनु' उपसर्ग और 'धञ्' प्रत्यय के योग से बना

है। (अनु+वद्+धञ् = अनुवाद) इसमें ‘अनु’ का अर्थ है ‘पीछे’ और ‘वद्’ धातु का अर्थ है- ‘बोलना’ या ‘कहना’। इस प्रकार पूर्व-कथित का अनुसरण करके अभिव्यक्त किए गए कथन को अनुवाद कहते हैं या एक भाषा में उपलब्ध कथन-सामग्री का अनुसरण करते हुए उसे दूसरी भाषा में प्रस्तुत करना ही अनुवाद है।

‘शब्दार्थ चिन्तामणि’ नामक कोश में अनुवाद शब्द को इस प्रकार समझाया गया है : ‘प्राप्तस्य पुनः कथनेऽनुवाद अर्थात् पूर्वकथित का (पुनः) कथन अनुवाद है।’ जैमिनि न्यायमाला में ‘ज्ञातस्य कथमनुवाद’ अर्थात् ज्ञान का (पुनः) कथन को अनुवाद कहा है। (कुमार पृ. 16 से उदधृत)

वैदिक साहित्य से लेकर ब्राह्मण ग्रंथों, उपनिषदों और व्याकरण ग्रंथों में ‘अनु’ उपसर्ग और ‘वद्’ धातु से बने पदों का भिन्न-भिन्न प्रयोग हुआ है, जिसका अर्थ है ‘अनुवाक्’ (गुरु के कथन का शिष्यों द्वारा दुहराना), ‘पश्चातकथन’, ‘विघि का पुनः कथन’, ‘पुनः कथन’, ‘ज्ञान को कहना’, ‘आवृत्ति’, ‘सार्थक आवृति’ आदि। इस प्रकार भारतीय दर्शन, उपनिषद तथा वैदिक साहित्य से ‘छाया’, ‘भाषा’, ‘टिका’, ‘व्याख्या’, ‘भावानुवाद’, ‘भाषांतर’, ‘तर्जुमा’, ‘उल्था’ आदि अनेकविध शब्दों की यात्रा पूर्ण करता हुआ पारिभाषिक शब्द ‘अनुवाद’ 19वीं शताब्दी के अंत में सर्व स्वीकृत और मान्य हुआ। अनुवाद शब्द को अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए उसके व्युत्पत्तिपरक अर्थ को समझना आवश्यक है।

अनुवाद का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है - पुनः कथन, पुनः आवृत्ति, एक बार कही हुई बात को दुबारा कहना। इसमें पुनरावृत्ति होती है ‘अर्थ’ की, न कि ‘शब्द’ की। अनुवाद के लिए अंग्रेजी में प्रयुक्त शब्द ‘Translation’ लैटिन भाषा के Trans अर्थात् ‘पार’ और Lation अर्थात् ‘ले जाना’, ‘वहन करना’ के योग से बना है जिसका व्युत्पत्तिपरक अर्थ है ‘पारवाहन’ अर्थात् एक स्थान-बिंदु से दूसरे स्थान-बिंदु पर ले जाना। यह स्थान बिंदु भाषिक पाठ है। इसमें भी ले जानेवाली चीज़ अर्थ होती है,

शब्द नहीं। अतः यह स्पष्ट है कि इन दोनों ही भाषा में प्रयुक्त शब्दों के व्युत्पत्तिपरक अर्थ व्यावहारिक धरातल पर एक समान है।

अनुवाद की प्रकृति को स्पष्ट रूप से समझाते हुए डॉ. सुरेश कुमार ने कहा है कि वस्तुतः अनुवाद शब्द का भारतीय परंपरा वाला अर्थ आधुनिक संदर्भ में भी मान्य है और इसी को केन्द्र बिंदु बनाकर हम अनुवाद की प्रकृति को अधिक अच्छे ढंग से समझ सकते हैं। डॉ. सुरेश कुमार ने अनुवाद के तीन अर्थ-संदर्भ माने हैं - समभाषिक, अन्यभाषिक और अन्तरसंकेतपरक। समभाषिक संदर्भ में अर्थ की पुनरावृत्ति एक ही भाषा की सीमा के भीतर होती है, परंतु इसके आयाम अलग-अलग हो जाते हैं जो मुख्यतः दो हैं- कालक्रमिक और समकालिक। अन्यभाषिक अनुवाद दो भाषाओं के बीच होता है। ये दो भाषाएँ ऐतिहासिकता और क्षेत्रीयता के समन्वित मापदंड पर स्वतंत्र भाषाओं के रूप में पहचानी जाती है। यही कारण है कि आज व्यवहार में 'अनुवाद' शब्द से अन्यभाषिक अनुवाद का अर्थ लिया जाता है। संस्कृत परंपरा का 'छाया' शब्द तथा उर्दू का 'तर्जुमा' शब्द इसी स्थिति का संकेत करने के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं। (कुमार पृ. 22)

अनुवाद के उपर्युक्त दोनों अर्थ-संदर्भ डॉ. सुरेश कुमार के अनुसार अपेक्षाकृत सीमित है। इनमें अनुवाद को भाषा-संकेतों का व्यापार माना गया है। वस्तुतः भाषा-संकेत, संकेतों की एक विशिष्ट श्रेणी हैं जिनके द्वारा संप्रेषण कार्य संपन्न होता है। संप्रेषण के लिए विभिन्न कोटियों के संकेतों को काम में लाया जाता है। इन्हें सामान्य संकेत कहा जाता है। इनकी दृष्टि से भी अनुवाद शब्द की व्याख्या की जा सकती है। इसके अनुसार एक कोटि के संकेतों द्वारा कही गई बात को दूसरी कोटि के संकेतों द्वारा पुनः कहना 'अनुवाद' है।

इस प्रकार 'अनुवाद' शब्द की व्यापक परिधि में तीनों कोटियों के अनुवादों का स्थान है - समभाषिक अनुवाद, अन्यभाषिक अनुवाद और अन्तरसंकेतपरक अनुवाद।

इन तीनों का अपना-अपना सैद्धांतिक आधार है किंतु सैद्धांतिक औचित्य की दृष्टि से अन्यभाषिक अनुवाद की स्थिति केन्द्रीय है। इसीलिए 'अनुवाद' शब्द से अन्यभाषिक अनुवाद का अर्थ ग्रहण किया जाता है।

2.1.1 अनुवाद की परिभाषाएँ

विभिन्न विद्वानों द्वारा अलग-अलग उद्देश्य को ध्यान में रखकर दी गई परिभाषाओं का अध्ययन अनुवाद के स्वरूप को उसकी समग्रता में समझने हेतु विशेष रूप से सहायक होगा।

1. एम. ए. हैलिडे के अनुसार

"अनुवाद एक संबंध का नाम है, जो दो या दो से अधिक पाठों के बीच होता है, ये पाठ समान स्थिति में समान प्रकार्य संपादित करते हैं। दोनों पाठों का संदर्भ समान होता है और उनसे व्यंजित होने वाला संदेश भी समान होता है।" (Halliday पृ. 124)

2. जे. सी. कैटफोर्ड के अनुसार

"एक भाषा की पाठ्य-सामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्य सामग्री द्वारा प्रतिस्थापित करना अनुवाद कहलाता है।" (Catford पृ. 20)

3. डी. पी. पट्टनायक के अनुसार

"अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सार्थक अनुभव एक भाषा-समुदाय से दूसरे भाषा-समुदाय को संप्रेषित किया जाता है।" (Pattanayak पृ. 57)

4. यूजेन नाइडा के अनुसार

"मूल भाषा के संदेश के सममूल्य संदेश को लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करने की क्रिया को अनुवाद कहते हैं, संदेशों की यह मूल्यसमता पहले अर्थ और फिर शैली की दृष्टि से निकटतम एवं स्वाभाविक होती है।" (Nida पृ. 12)

5. आर. आर. हार्टमन और स्टार्क के अनुसार

"एक भाषा या भाषा-भेद से दूसरी भाषा या भाषा-भेद में प्रतिपाद्य को स्थानांतरित करने की प्रक्रिया या उसके परिणाम को अनुवाद कहते है।" (R. R. K. Hartmann and F. C. Stork पृ. 242)

6. भोलानाथ तिवारी के अनुसार

"भाषा ध्वन्यात्मक प्रतीकों की व्यवस्था है और अनुवाद इन्हीं प्रतीकों का प्रतिस्थापन अर्थात् एक भाषा के प्रतीकों के स्थान पर दूसरी भाषा के निकटतम (कथनतः और कथ्यतः) समतुल्य और सहज प्रतीकों का प्रयोग। इस प्रकार अनुवाद निकटतम, समतुल्य और सहज प्रतिप्रतीकन प्रक्रिया है।" (तिवारी पृ. 12)

7. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव व कृष्णकुमार गोस्वामी के अनुसार

"एक भाषा (स्रोत भाषा) की पाठ सामग्री में अंतर्निहित तथ्य का समतुल्यता के सिद्धांत के आधार पर दूसरी भाषा (लक्ष्य भाषा) में संगठनात्मक रूपांतरण अथवा सर्जनात्मक पुनर्गठन को ही अनुवाद कहा जाता है।" (रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, कृष्ण कुमार गोस्वामी पृ. 45)

8. मा. गो. चतुर्वेदी, कृष्ण कुमार गोस्वामी के अनुसार

"अनुवाद से तात्पर्य एक भाषा की सामग्री को दूसरी भाषा में प्रस्तुत करना है। अनुवाद एक प्रकार का ओपरेशन अर्थात् संक्रिया है। इस संक्रिया द्वारा एक भाषा की पाठ-सामग्री दूसरी भाषा में प्रतिस्थापित की जाती है।" (मा. गो. चतुर्वेदी, कृष्ण कुमार गोस्वामी पृ. 15)

संक्षेप में अनुवाद एक भाषा में प्रस्तुत पाठ अर्थ को दूसरी भाषा में स्थानांतरित करता है। पहली भाषा को स्रोत भाषा कहते है और उस भाषा के पाठ को मूल पाठ कहा जाता है। दूसरी भाषा को लक्ष्य भाषा कहते है और इस भाषा के पाठ को अनूदित पाठ कहा जाता है। अनुवाद में भाषा बदल जाती है पर पाठ्य सामग्री, सूचना

अथवा संदेश अपने मूल अर्थ में ही संप्रेषित किया जाता है। यह संप्रेषण यथासंभव समान भाषा-शैली, सामाजिक-सांस्कृतिक वैशिष्ट्य को संरक्षित रखता हुआ लक्ष्य भाषा के पाठक को स्वाभाविक रूप से ग्रहणीयोग्य लगता है। उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि

(1) अनुवाद एक भाषा (स्रोत भाषा) की सामग्री को दूसरी भाषा (लक्ष्य भाषा) में रूपांतरित करने की प्रक्रिया का परिणाम है।

(2) अनूदित किए जाने वाली सामग्री को मूल पाठ और रूपांतरित सामग्री को अनूदित पाठ कहा जायेगा।

(3) मूल पाठ और अनूदित पाठ में अर्थ और भाषा-शैली विशेष की, समतुल्यता होनी चाहिए, यद्यपि यह सर्वांशतः असंभव-सा है किंतु दोनों पाठ अधिकतम साम्य रखते हों यह आवश्यक है।

(4) दूसरी भाषा प्रायः वह होती है, जिसके प्रयोक्ता पहली भाषा से भिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के होते है।

2.1.3 अनुवाद का महत्व

वर्तमान युग सूचना प्रौद्योगिकी और संचार-क्रांति का युग है। ज्ञान-विज्ञान के निरंतर विस्तृत होते क्षितिज ने विश्व को एक ग्राम (ग्लोबल विलेज) की संज्ञा से अभिहित कर दिया है। भूमंडलीकरण की अवधारणा और 'विश्वग्राम' की संकल्पना का आधार निश्चित रूप से संचार तथा अनुवाद को ही माना जा रहा है। आज का युग अनुवाद का युग है। उदारीकरण के फल स्वरूप देश-विदेश के अनेक भिन्न भाषा-भाषी समुदायों के साथ मनुष्य का व्यवहार तेजी से बढ़ रहा है। एक ही देश में व्यवहृत विभिन्न भाषा-भाषियों से संपर्क का एक मात्र उपकरण अनुवाद ही है। अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर साहित्यिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, पारंपरिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, वाणिज्यिक और वैचारिक आदान-प्रदान अनुवाद के माध्यम से ही

संभव हो पाया है। ज्ञान-विज्ञान की अधुनातन सूचनाओं को प्रसारित करने में अनुवाद की उपादेयता असंदिग्ध है। इन सभी कारणों से अनुवाद के अनेक-विध महत्वपूर्ण आयाम हमारे समक्ष उभर कर आए हैं।

2.1.3.1 सांस्कृतिक समन्वय, बहु-संस्कृति और विश्व-शांति का माध्यम अनुवाद

संसार में समय-समय पर महत्वपूर्ण सभ्यताओं और संस्कृतियों का विकास हुआ है। इनके बीच परस्पर विचारों का आदान-प्रदान अनुवाद के माध्यम से हुआ है। मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखने की दृष्टि प्रदान करने वाले संसार के धार्मिक साहित्य- भारतीय दर्शन, गीता, उपनिषद, त्रिपिटक, बाइबिल, कुरान का प्रचार-प्रसार अनुवाद के माध्यम से संभव हो पाया है। विविध राष्ट्रों की सांस्कृतिक विरासत के मध्य एक सेतु बांधने का काम अनुवाद ने किया है। आज अनुवाद ने अलग-अलग राष्ट्रों की सांस्कृतिक विरासतों के मध्य एक ऐसे सेतु का निर्माण किया है जिसकी परिणति राजनीतिक स्तर पर बहु-संस्कृति के रूप में उजागर हुई है। यह सांस्कृतिक समन्वय राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर परस्पर शांति बहाल करके विश्व-शांति स्थापित करने का कार्य अनुवाद के बिना संभव नहीं हो सकता है।

2.1.3.2 विश्व साहित्य, ज्ञान और तकनीक के प्रचार-प्रसार का माध्यम

विश्व साहित्य के आदान-प्रदान तथा ज्ञान और तकनीक के प्रचार-प्रसार में अनुवाद की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। विश्व मंच पर अनुवाद ही वह माध्यम है जिसने शेक्सपियर, टोल्सटोय, इलियट, मिलेट, मोपासा, कामू, काफ्का, सात्र, कालिदास, वाल्मीकि, टैगोर, शरदचंद्र, प्रेमचंद जैसे साहित्यकारों की अपनी-अपनी दुनिया से दूसरी भाषा के पाठकों को रू-बरू करवाया। प्राचीन काल में सर्व प्रथम आरबों ने भारतीय गणित-शास्त्र, खगोल-शास्त्र और आयुर्वेद से प्रभावित होकर उसे अरबी भाषा में दुनिया के समक्ष रखा। बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से चीनी

विद्वानों ने भारतीय ग्रंथों का अनुवाद किया। रामायण, महाभारत, भगवद् गीता, पंचतंत्र आदि अरबी-फारसी में अनूदित हुए। मैक्स मूलर ने भारतीय उपनिषदों का अंग्रेजी में अनुवाद किया। इसी प्रकार महर्षि श्री अरविंद द्वारा संस्कृत के आर्ष एवं क्लासिक रचनाकार कालिदास, वेद व्यास और वाल्मीकि की रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद किया गया। भारत के भिन्न-भाषा-भाषी क्षेत्रों में रचित महत्वपूर्ण साहित्य अनुवाद के माध्यम से ही राष्ट्रीय स्तर पर आ सका है। भारतीय साहित्य की अवधारणा का आधार भी निःसंदेह अनुवाद है। इसी प्रकार भारतीय साहित्य अनुवाद के माध्यम से विश्व साहित्य पटल पर पहुँचा है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजली' प्रेमचंद का 'गोदान', जयशंकर प्रसाद की 'कामयनी' जैसी रचनाएँ इसका उदाहरण है। वहीं उमर खैयाम की रूबाइयाँ, शेक्सपियर के 'हेमलेट', 'ऑथेलो', टॉलस्टॉय का 'वॉर एन्ड पिस', मिल्टन का 'पैराडाइस लोस्ट', देरिदा की 'ऑफ ग्रामेटोलोजी' जैसी विदेशी रचनाएँ अनुवाद के माध्यम से ही भारतीय पाठकों को मिल पाई हैं।

आज भूमंडलीकरण के युग में न केवल विविध साहित्यिक विधाओं का वरन् साहित्येतर ज्ञान और तकनीक के क्षेत्रों का विश्व स्तर पर तेज गति से अनुवाद हो रहा है। विज्ञान के आविष्कारों की जानकारी, चिकित्सा संबंधी खोज, तकनीकी उपलब्धियाँ और ज्ञान का लाभ अनुवाद के माध्यम से ही विश्व को प्राप्त हो रहा है। इंटरनेट पर उपलब्ध विविध अनुवाद सॉफ्टवेर और गूगल आदि द्वारा समग्र वेब पेज को अनूदित करने की सुविधा उपलब्ध करना, अनुवाद के महत्व का ही द्योतक है।

2.1.3.3 भाषा-परक आदान-प्रदान और विश्व भाषा का निर्माण

अनुवाद विश्व भाषा के विकास की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक भाषा से दूसरी भाषा में साहित्य का अनुवाद करते समय विभिन्न समाजों की अलग-अलग परंपराएँ एवं संस्कृतियाँ एक भाषा से दूसरी भाषा में अंतरित हो जाती है। इस के साथ उस संस्कृति विशेष की मान्यताओं और भाव से

जुड़े विशिष्ट शब्द भी वहन करते हैं जिससे लक्ष्य भाषा पुष्ट और समृद्ध होती है। वर्तमान में प्रयोग में लायी जा रही हिन्दी, अंग्रेजी, फ्रेंच, लैटिन, फारसी, आदि भाषाओं के मध्य इस प्रकार के आदान-प्रदान को स्पष्टतः देखा जा सकता है। इस क्रम में अनुवाद निश्चित रूप से आगे चलकर विश्व भाषा के विकास में सहयोगी बनता है।

2.1.3.4 हिन्दी साहित्य को विश्व साहित्य और संस्कृति से जोड़ने का संपर्क सूत्र

अनुवाद एक भाषा के साहित्य को दूसरी भाषा तक ले जाने का महत्वपूर्ण काम करता है। इस दृष्टि से अनुवाद तुलनात्मक साहित्य की मुख्य धुरी है। विश्व की प्रमुख भाषाओं की विशिष्ट साहित्यिक कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन अनुवाद के द्वारा ही संभव हो सका है। इस दृष्टि से हिन्दी के महत्वपूर्ण रचनाकार और उनकी रचनाओं का विश्व की विविध भाषाओं में अनुवाद किया गया है और विश्व के महत्वपूर्ण रचनाकार और विशिष्ट रचनाओं से उसकी तुलना की गयी है। कबीर और फ्रांस भाषा के रैबल, निराला और एजरा पाउंड, पंत और वर्ड्सवर्थ, अज्ञेय और टी. एस. इलियट, प्रेमचंद और रूस के मैक्सिम गोर्की, जयशंकर प्रसाद और विलियम शेक्सपियर आदि का तुलनात्मक अध्ययन अनुवाद के द्वारा ही संभव हो सका है। अनुवाद के द्वारा ही भारत की विविधता में एकता रखने वाली संस्कृति, भारत की प्रमुख भाषा - हिन्दी, में निर्मित साहित्य के साथ-साथ विश्व की विभिन्न संस्कृतियों से संपर्क स्थापित कर सकी है। कुल मिलाकर अनुवाद हिन्दी साहित्य और भारतीय संस्कृति को विश्व साहित्य और संस्कृति से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

इस प्रकार अनुवाद सांस्कृतिक समन्वय, साहित्य के प्रचार व विकास और भाषायी आदान-प्रदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

2.2 अनुवाद कार्य की संक्षिप्त विकास-यात्रा

अनुवाद के सैद्धांतिक पक्ष पर चिंतन-विचार करने से पूर्व अनुवाद के इतिहास का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करना अनुचित न होगा। यहाँ अनुवाद कार्य के प्रारंभ से लेकर अनुवाद के महत्वपूर्ण पड़ावों का अति संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इसे तीन विभागों में विभाजित किया गया है :

2.2.1 विश्व के संदर्भ में अनुवाद का इतिहास

2.2.2 भारत के संदर्भ में अनुवाद का इतिहास

2.2.3 हिन्दी के विशेष संदर्भ में अनुवाद का इतिहास

2.2.1 विश्व के संदर्भ में अनुवाद का इतिहास

विश्व के संदर्भ में अनुवाद के इतिहास को काल-खंड की दृष्टि से मुख्यतः तीन भागों में बांटा जाता हैं :

2.2.1.1 प्राचीनकाल

2.2.1.2 मध्यकाल

2.2.1.3 आधुनिक काल

2.2.1.1 प्राचीनकाल

विश्व के संदर्भ में अनुवाद का प्राचीन काल ई. पू. तीन हजार से शुरू होकर सन् पांच तक चलता है। प्राचीन काल में अनुवाद का उपयोग धार्मिक और राजनीतिक गतिविधियों में सफलता प्राप्ति के लिए किया जाता था। इस समय-खंड में अनुवाद के लिए प्रमुख रूप से 'शब्द के लिए शब्द' और गौण रूप से 'भाव के लिए भाव' जैसी अनुवाद की पद्धतियाँ प्रयोग में लाई जाती थी।

अनुवाद का सर्वप्रथम प्रमाण ईसा से तीन हजार वर्ष पूर्व मिस्र में दो भाषाओं में लिखे एक शिलालेख से उपलब्ध होता है।

बेबीलोन के राजा हम्मुरब्बी के समय लगभग ई. पू. 2100 में अलग-अलग

भाषाओं का प्रचलन था। राजा राजभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा में अनुवाद करवा के राज-काज का कार्य करता था।

अनुवाद का सबल प्रमाण पाँचवीं सदी में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से जुड़े यहूदी समुदाय से मिलता है। यहूदी व्यापारी पाँचवीं सदी में भी अरबी भाषा जानते थे लेकिन ये व्यापारी जब स्वदेश लौटते थे तो देश की मूल भाषा न तो पढ़ सकते थे और न ही समझ सकते थे। उनकी सुविधा के लिए नेहुमिया नामक एक यहूदी नेता ने उनकी शास्त्रीय और आध्यात्मिक रचनाओं का प्राचीन हिब्रू से अरबी में अनुवाद करवाया था। (Nida पृ. 11)

मिस्र का एलेकजेंड्रिया शहर व्यापारिक केन्द्र था। वहाँ ग्रीक भाषा जानने वाले कई यहूदी रहते थे। उनके लिए बाइबिल का प्रथम भाग - 'ओल्ड टेस्टामेंट' को हिब्रू से ग्रीक में अनूदित किया गया।

ईसा पूर्व दूसरी सदी का एक प्रसिद्ध अनुवाद है 'रोसेटा स्टोन'। इसमें इजिप्शियन से ग्रीक में अनुवाद है। यह शिलालेख अफ्रीका स्थित नील नदी के पश्चिमी मुहाने पर है।

रोमन विद्वान लेखक सिसरो ने ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में प्लेटो के 'प्रोटागोरस' और अन्य कार्यों का ग्रीक से लैटिन में अनुवाद किया। सिसरो ने शब्दानुगामी और अर्थानुगामी अनुवाद का अंतर स्पष्ट किया और साहित्यिक रचनाओं के लिए अर्थानुगामी अनुवाद को प्रधानता दी। इन्होंने 'भाव अनुसार भाव' को प्रधानता देते हुए कहा कि, 'यदि मैं शब्द के अनुसार शब्द रखूंगा तो उसका नतीजा अजीब होगा और यदि मैं आवश्यकता अनुसार शब्द-क्रम या शब्दों में कुछ परिवर्तन करूंगा तो मैं अनुवादक के कार्य से दूर निकल जाऊंगा। (Susan Bassnett and Mc Guire पृ. 43)

ईसा के प्रथम शताब्दी में रोमन लेखक प्लिनी द यंगर (62-113) ने अनुवाद

का साहित्यिक तकनीक के रूप में प्रयोग और प्रचार किया।

बाइबिल के दूसरे भाग 'न्यु टेस्टामेंट' का हिब्रू से व्यवहारिक लैटिन में अनुवाद करने का काम सन्त जेरोम ने चौथी सदी में किया। उसने अनुवाद में अर्थानुगामिता को प्रधानता देते हुए 'भाव अनुसार भाव' का मार्ग अपनाया।

2.2.1.2 मध्यकाल

अनुवाद का मध्यकाल यूरोप में पाँचवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से लेकर पंद्रहवीं शताब्दी तक माना जाता है। जबकि ओरिएंटल और अफ्रीकी राष्ट्रों में यह समय-खंड अठारहवीं शताब्दी तक चलता है।

अनुवाद की दृष्टि से आठवीं और नौवीं शताब्दी का योगदान महत्वपूर्ण है। यह वह समय है जब अरबी भाषा का प्रचलन जोर-शोर से बढ़ रहा था। ग्रीक भाषा से कई कृतियाँ अरबी में अनूदित हुई। सीरिया से बगदाद आए विद्वानों ने फ्रिजिशियन हिपोक्रेटस (460-360 ई. पू.) तत्व चिंतक प्लेटो (427-347 ई. पू.) और अरस्तू (384-322 ई. पू.) के ग्रीक में किए गए सृजन का अरबी भाषा में अनुवाद किया। बगदाद में अनुवाद का यह सिलसिला बारहवीं शताब्दी तक चलता रहा।

आठवीं शताब्दी में स्पेन पर अपना शासन कायम करने वाले मूरिश ने अरबी और सीरियाई भाषा से 'लिंगुआफ्रेंका' (प्रयोग के लिए सामान्य भाषा) के रूप में मान्य लैटिन भाषा में अनुवाद कार्य को बढ़ावा दिया। जब मूरिश शासन का अंत हुआ तब टोलेडो के अनुवादकों ने ग्रीक भाषा की प्राचीन वैज्ञानिक और दार्शनिक रचनाओं का अरबी से लैटिन में अनुवाद किया।

चौदहवीं शताब्दी में जॉन वाइक्लिफ (1330-1384) ने यह तर्क देते हुए संपूर्ण बाइबिल का अंग्रेजी में अनुवाद किया कि बाइबिल प्रत्येक भाषा में उपलब्ध होनी चाहिए क्योंकि प्रत्येक मनुष्य ईश्वर से सीधा जुड़ा है और ईश्वर के नियम और कुछ नहीं, बल्कि बाइबिल है। इस तर्क के पीछे उसकी आम आदमी और ईश्वर के बीच से

पोप, बिशप, आर्क बिशप आदि की मध्यस्थता दूर करने की प्रबल इच्छा कार्यरत थी। बाद में कुछ परिवर्तन किए और 'इंटेलिजेंट, इडियामेटिक वर्शन' तैयार किया ताकि आम आदमी भी उसे बिीना किसी कठिनाई के समझ सके। (Susan Bassnett and Mc Guire पृ. 47)

सोलहवीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण घटना है 'प्रोटेस्टेंटिज्म' आंदोलन। इस आंदोलन ने बाइबिल के स्थानीय भाषाओं में अनुवाद करने की प्रवृत्ति को बल प्रदान किया। यह आंदोलन मूलतः चर्च का समाज पर बढ़ रहे अधिकारों का विरोध कर रहा था। तत्कालीन राजकुमारों ने चर्च से जुड़े धार्मिक गुरुओं के कार्य और सत्ता संबंधी कई तरह के परिवर्तनों की मांग की ताकि समाज, धर्म और अर्थ-व्यवस्था पर से उनके नियंत्रण को दूर किया जा सके। इसीलिए इस आंदोलन को 'रिफर्मेशन' की संज्ञा भी दी गई। इस आंदोलन का सर्वाधिक प्रभाव जर्मन में देखा गया जहाँ चर्च के अधिकारियों ने देश की आवाम को उनकी स्थानीय भाषा में बाइबिल पढ़ने पर रोक लगा दी थी।

इस आंदोलन के विरुद्ध एक सैद्धांतिक हथियार के रूप में बाइबिल का प्रयोग करने के लिए जर्मन तत्व चिंतक और नवसुधार के अग्र गण्य नेता मार्टिन लूथर (1483-1546) ने बाइबिल का संपूर्ण अनुवाद 1534 तक पूर्ण कर दिया। लूथर की दलील थी कि "लोग 'पवित्र ग्रंथ' को अपनी भाषा में ही सही तरह से समझ सकते हैं। सोलहवीं सदी में अनुवाद प्रवृत्ति, मुख्यतः बाइबिल अनुवाद का इतिहास प्रोटेस्टेंटिज्म के साथ जुड़ गया।" (Nida पृ. 14)

इसी समय वहाँ के मजदूर-किसान नेता थोमस मंजर ने लैटिन शब्दावली का प्रमाण कम हो ऐसे बाइबिल के अनुवाद का समर्थन करते हुए एक ऐसे सैद्धांतिक शस्त्र के रूप में उसका उपयोग किया जो न केवल कैथोलिक धर्मगुरुओं के विरुद्ध था बल्कि मजदूर-किसानों शोषक सेक्सोनी राजाओं के विरुद्ध भी था। सेक्सोनी राजाओं ने

उसे फाँसी दे दी। (Engels पृ. 60) बाइबिल के अनुवाद से जुड़ी ऐसी घटनाओं से पता चलता है कि किस प्रकार शोषित वर्ग ने अनुवाद का उपयोग अपना विरोध जताने के लिए किया था।

कुछ इसी प्रकार की घटना इंग्लैंड में तब हुई जब बाइबिल के अनुवाद का तरीका चर्च के अधिकारियों की सत्ता के लिए ख़तरा बन गया। इंग्लैंड के एक धार्मिक सुधारक विलियम टिंडल (1494-1536) द्वारा किए गए ग्रीक से 'न्यु टेस्टामेंट' और हिब्रू से 'ओल्ड टेस्टामेंट' के अंग्रेजी अनुवादों के साथ उसे 1936 में सार्वजनिक रूप से जिंदा जला दिया गया। (Nida पृ. 15)

यूरोप में हुई इन घटनाओं ने दर्शाया की अनुवाद मात्र विद्वत्तापूर्ण कार्य ही नहीं है, बल्कि सामाजिक समुदायों के मध्य संघर्ष करने का एक सैद्धांतिक शस्त्र भी है। सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध से अनुवाद प्रकिया और उससे जुड़े तकनीकी मुद्दों पर चर्चा प्रारंभ हो जाती है। इस समय राजा जेम्स-I ने अंग्रेजी में बाइबिल का ऐसा अनुवाद करवाया जो चर्च में पढ़ा जा सके। अंग्रेजी साहित्य पर इसका काफी प्रभाव पड़ा। यही वह समय है जब ग्रीक, लैटिन और फ्रेंच भाषाओं की महत्वपूर्ण क्लासिकल रचनाओं का अधिक मात्रा में अनुवाद होने लगा।

इस अवधि में प्रसिद्ध कवि जॉन ड्राइडन (1631-1700) ने महत्वपूर्ण विचार प्रकट किए। उन्होंने अनुवाद के तीन प्रकार बताए हैं -

1) मैटाफ्रेज़ : 'शब्द-प्रति-शब्द' और 'वाक्य-प्रति-वाक्य' अनुवाद 2) पैराफ्रेज़ : अर्थानुगामी अनुवाद अर्थात् 'भाव के लिए भाव' द्वारा अनुवाद और 3) इमिटेशन : अनुकरण अर्थात् 'कृति की आत्मा बनाए रखने के लिए मूल के शब्द और अर्थ दोनों छोड़ने की स्वतंत्रता।'

एलेक्जेंडर पोप ने भी इस मत का समर्थन किया।

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अनुवाद से संबंधित एक महत्वपूर्ण कार्य

एलेक्जेंडर फ्रेजर टाइटलर द्वारा किया गया। इसे 'द प्रिंसिपल्स ऑफ ट्रांसलेशन (सन् 1791) के रूप में अनुवाद सिद्धांत की प्रथम व्यवस्थित पुस्तक लिखने का गौरव हुआ। इसने अनुवाद में मुख्य तीन बातों पर बल दिया - 1) The idea (संकल्पना) 2) The style and manner of writing (शैली) और 3) The case of original work (मूल रचना-प्रकृति)। (Susan Bassnett and Mc Guire पृ. 63) टाइटलर ने ही प्रभावसमता अर्थात् 'अनूदित रचना के पाठकों को मूल रचना के पाठकों जितनी ही तीव्र अनुभूति हो' का विचार अभिव्यक्त किया था।

2.2.1.3 आधुनिक काल

अनुवाद के संदर्भ में आधुनिक काल का आरंभ उन्नीसवीं शताब्दी से माना जाता है। इस समय अन्य भाषा से अंग्रेजी में कई रचनाएँ अनूदित हुई। गेटे, लियो टोल्सटोय, गाय दी मोपासां, ज्यां-पाल सार्त्र आदि की रचनाओं का अंग्रेजी में अनुवाद हुआ। एडवर्ड फिट्जेराल्ड ने उमर खैयाम की रूबाइयों का अनुवाद किया। शैली और बायरन ने कई रचनाएँ अनूदित की। मैथ्यू आर्नल्ड ने होमर की कृतियों का उदात्त भाषा-शैली में अनुवाद किया।

उन्नीसवीं शताब्दी में मिशनरियों ने विश्व की अनेक भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद किया। इसके लिए यूरोप के आधिपत्य वाले सभी देशों की भाषाओं की शब्द-सूचियाँ और व्याकरण की प्रमुख बातों की सूची तैयार की गई। इसका लाभ उन्हें बाइबिल के अनुवाद में मिला।

बीसवीं शताब्दी में धार्मिक और राजनीतिक सत्ता ने अनुवाद कार्य को सामाजिक परिप्रेक्ष्य में बढ़ावा दिया। सील (SIL) अर्थात् समर इन्स्टीट्यूट ऑफ लिंग्विस्टिक्स को इसका श्रेष्ठ उदाहरण कहा जा सकता है। बाइबिल के अनुवाद कार्य में व्यस्त इस संस्था के 29 देशों में लगभग 3700 सदस्य रहे हैं। यह संस्था 675 भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद करती रही है।

'युनाइटेड बाइबिल सोसायटीज' दूसरी ऐसी विश्व व्यापक संस्था है जो विविध भाषाओं में बाइबिल के अनुवाद कार्य का सैद्धांतिक विवेचन और मूल्यांकन करती है। यूजेन नाइडा इसी संस्था के सचिव पद रहे थे। इस संस्था ने सन् 1950 में 'दि बाइबिल ट्रांसलेटर' नाम से एक तिमाही पत्रिका शुरू की है। इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ ट्रांसलेटर्स ने सन् 1955 में यूनेस्को की तरफ से एक तिमाही पत्रिका 'बेबेल' शुरू की। यह पत्रिका अनुवाद के समसामयिक सिद्धांतों, मान्यताओं और अनुवाद-प्रकिया पर आधारित है।

बीसवीं शताब्दी के पाँचवें-छठे दशक में चीन ने अनुवाद को एक राजनीतिक मिशन के रूप में अपनाया। (Winter पृ. 173) विंटर का मानना है कि एशियन रचनाओं के जो रशियन अनुवाद हुए उसके पीछे भी सोवियत यूनियन का इरादा गैर यूरोपी देशों के बीच अपनी खास जगह बनाना था और इससे वास्तव में अमेरिका को वह चुनौती मिली जो सेना और आर्थिक मदद देने से भी मुश्किल थी। (Winter पृ. 176)

अस्सी के दशक से चीन में सेक्स और धर्म से संबंधी रचनाओं के अनुवाद भी होने लगे जो कि 'कल्चरल रिवोल्युशन' के दौर मैं प्रोत्साहित नहीं किए जाते थे। (Liu पृ. 43)

2.2.2 भारत के संदर्भ में अनुवाद का इतिहास

प्राचीन काल से भारतीय संस्कृति के ज्ञान और साहित्य की परंपरा उच्च स्तर पर विराजमान रही है। भारतीय संस्कृति विश्व की अन्य महत्वपूर्ण संस्कृतियों के संपर्क में आई और इनके मध्य आदान-प्रदान भी हुआ। फिर भी अनुवाद के संदर्भ में भारत का इतिहास पश्चिमी देशों जैसा नहीं है। यह बड़ी आश्चर्य की बात है कि विश्व की महत्वपूर्ण संस्कृतियों के संपर्क में रहने पर भी भारत में अनुवाद-साहित्य उपलब्ध नहीं होता। न सिर्फ संस्कृत वरन् पालि, प्राकृत और अपभ्रंश में भी नहीं। यद्यपि संस्कृत की कई रचनाएँ अन्य भाषाओं में अनूदित होने के प्रमाण उपलब्ध है। शायद

इसके पीछे ज्ञान, विज्ञान और अध्यात्म की सशक्त परंपरा ही रही होगी जिसने अन्य भाषाओं से कुछ ग्रहण करने की आवश्यकता अनुभव नहीं की होगी।

संस्कृत में सर्वप्रथम वेदों की रचना हुई जिसमें ऋग्वेद प्राचीनतम ग्रंथ है। तत्पश्चात् उपनिषदों का सृजन हुआ। चौथी शताब्दी में रचित पाणिनीय 'अष्टाध्यायी' इस कालावधि की श्रेष्ठ संस्कृत-व्याकरण रचना है। महाकाव्य 'महाभारत' और 'रामायण' द्वितीय शताब्दी के आस-पास लिखे गए। प्रबंधन, कला, गणित और अन्य विज्ञानों पर आधारित बहु प्रसिद्ध कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' भी इसी समय की श्रेष्ठ रचना है। बुद्ध के प्रभाव से प्रारंभिक बौद्ध साहित्य पालि में लिखा गया किंतु बाद में बौद्ध साहित्य बड़ी मात्रा में संस्कृत में लिखा गया। इसी समय में कालिदास, भवभूति, भारवि, माघ और बाण जैसे महाकवि हुए जिन्होंने संस्कृत साहित्य के इस काल-खंड को सुवर्णकाल का गौरव प्रदान किया। विश्व प्रसिद्ध 'पंचतंत्र' और 'कथासरित्सागर' का समय भी यही है।

वस्तुतः संस्कृत साहित्य में टीका की परंपरा लंबे समय से चली आ रही है जो अनुवाद का एक रूप है। शंकराचार्य ने उपनिषदों पर भाष्य लिखे और उसी भाष्य पर अनके शिष्यों ने टीकाएँ लिखीं।

यद्यपि अनुवाद-चिंतन की क्रमबद्ध परंपरा न रहने के बावजूद भारत अनुवादों से नितांत निरपेक्ष नहीं रहा। जिस व्यापक भारतीय संस्कृति की बात आज कही जाती है, उसके निर्माण में अनुवादों की निश्चित और महत्वपूर्ण भूमिका रही है। आर्य-द्रविड़ और निषाद जातियों के मिलन से एक नवीन आर्य-भाषी हिन्दी जाति पैदा हुई। चीन की ओर से मंगोलों की एक शाखा 2000 ई. पू. में भारत में आई और आर्यों से टकराव के बाद यहीं बस गई। 1100 ई. पू. तक इस मंगोल जाति ने साहित्य, लिपि, दर्शन और कलाओं का विकास कर बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली। इसके बाद बौद्ध धर्म के उत्थान और विदेशों में प्रसार के साथ अनुवाद के क्षेत्र में अविस्मरणीय कार्य हुए।

श्रीलंका, बर्मा, बाली, बोर्निया, चीन, तिब्बत, जापान आदि देशों की मुख्य भाषाओं में बौद्ध साहित्य के अनुवाद के साथ-साथ अन्य ग्रंथों के अनुवाद भी हुए। (प. र. पालीवाल पृ. 34-35)

दसवीं-ग्यारहवीं सदी में आधुनिक आर्य भाषाओं का विकास हुआ। इसमें रचनात्मक साहित्य का सृजन होने लगा। जिस पर अपनी पूर्ववर्ती रचनाओं का व्यापक प्रभाव पड़ा।

ग्यारहवीं सदी में सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद कार्य होने लगा। वेदव्यास रचित 'महाभारत' के पहले ढाई पर्व का नन्नया ने, बाकी के पर्वों का बारहवीं सदी में टिक्कणा ने और अधूरे छोड़े हुए तीसरे पर्व का चौदहवीं सदी में एरन्ना ने तेलुगु में अनुवाद किया और इसे 'कवित्रयम' की संज्ञा दी। इसी प्रकार 'रामायण' को अनेक भाषाओं में लिखा गया। सोलहवीं शताब्दी में भारत में संस्कृत के प्राचीन काव्यों 'रामायण', 'महाभारत', 'भगवद् गीता' तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों के असमी, बंगाली, मराठी, मलयालम और उडिया भाषाओं में अनुवाद हुए। (Chopada पृ. 64,78)

भारत में मध्यकाल में मुसलमानों के आगमन के पश्चात् अरबी-फारसी भाषा का प्रचलन बढ़ा। मुगल साम्राज्य की स्थापना के पश्चात् फारसी को राजभाषा बनाया गया। मुगल साम्राज्य में दीन-ए-इलाही धर्म के स्थापक अकबर की धार्मिक नीतियाँ सर्व-धर्म समभाव की भावना की पोषक थी। अकबर ने हिन्दू जाति के धार्मिक साहित्य का अनुवाद करवाना आवश्यक समझा और अपने शासन काल में एक स्वतंत्र अनुवाद विभाग की स्थापना की। 'महाभारत' और 'रामायण' का अनुवाद नबी खां, अब्दुल कादिर बदायूनी और शेख सुलतान ने मिलकर किया। हाजी इब्राहीम सरहिंदी ने 'अथर्ववेद', मौलाना शेरी और अबुल फ़ज़ल ने विश्व प्रसिद्ध 'पंचतंत्र' और 'नल-दमयंती की कथा' को फारसी में अनूदित किया।

अकबर ने संस्कृत के अलावा अन्य भाषाओं से भी फारसी में अनुवाद करवाया। अब्दुर्रहमान ख़ानख़ाना ने तुर्की में रचित 'बाबरनामा' और अरबी में रचित 'नज्मुलबल्दैन' का फारसी में अनुवाद किया। मुसलमानों का पवित्र ग्रंथ 'कुरान शरीफ' का फारसी में अनुवाद किया गया।

अकबर के शासन काल में अनुवाद प्रवृत्ति को काफी बल मिला। मुगल साम्राज्य में एक और धार्मिक सहिष्णु शासक हो गया - दाराशिकोह, इसने हिन्दू-मुस्लिम एकता बहाल करने के लिए स्वयं 'मनमा उल बहरैनी' ग्रंथ लिखा। इसमें विभिन्न धार्मिक ग्रंथों का अनुवाद है। सन् 1656 में उसने उपनिषदों का फारसी में अनुवाद 'सिर्रे अकबर' के नाम से करवाया। इसी ग्रंथ का अनुवाद फ्रांसीसी पर्यटक एंक्वेटिक डुपेरां ने फ्रेच में 'ओपनेखत' नाम से किया जो सन् 1802 में प्रकाशित हुआ। इसके आधार पर यूरोप के अन्य भाषाओं में किए गए उपनिषदों के अनुवाद के साथ भारतीय साहित्य से यूरोप वासी व्यापक रूप से प्रभावित हुए।

भारत में अंग्रेजों के आगमन के साथ भारतीय भाषाएँ अंग्रेजी भाषा के संपर्क में आई। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ईस्ट इंडिया कंपनी के कुछ अधिकारियों ने अपने अधीनस्थ क्षेत्रों की भाषा, साहित्य और सांस्कृतिक आदान-प्रदान में रुचि ली। उन्होंने भारत के बहुमूल्य प्राचीन ग्रंथों का अनुवाद करवाया और स्वयं भी अनुवाद कार्य में सहभागी हुए। नाथानियल हल्हेड ने संस्कृत में लिखे हिन्दू अधिनियमों का अनुवाद 'A Code of Gentoo Laws' (1776) नाम से, चार्ल्स विल्किन ने गीता को 'Songs of the adorable one' (1785) नाम से और विलियम जोन्स ने सन् 1789 में 'शाकुंतलम्' का अंग्रेजी में अनुवाद किया। ऑथमर फ्रेंक द्वारा अनूदित उपनिषदों के छोटे-छोटे संस्करणों ने काफी लोकप्रियता पाई। मेक्समूलर ने सन् 1884 तक उपनिषदों का अंग्रेजी अनुवाद 'sacrad books of the east' ग्रंथमाला के रूप में प्रकाशित किया।

भारतीय अनुवाद परंपरा में राजा राम मोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर और महर्षि अरविंद का योगदान उल्लेखनीय हैं। 19वीं शताब्दी में हिंदुत्व के आलोचक बन बैठे बंगाल के डच मिशनरियों को जवाब देने के लिए राजा राम मोहन राय ने वेदों, उपनिषदों, श्रीमद् भगवद् गीता का अंग्रेजी अनुवाद सन् 1816 से 1819 के बीच प्रकाशित किया। महर्षि अरविंद ने बंगाली, तमिल जैसी आधुनिक भारतीय भाषाओं और लैटिन तथा ग्रीक जैसी विदेशी भाषाओं के अनुवाद तो किए, साथ ही संस्कृत के महत्वपूर्ण ग्रंथों जैसे वेदों, उपनिषदों, श्रीमद् भगवद् गीता के साथ-साथ संस्कृत के महान रचनाकार - कालिदास, वेद व्यास और वाल्मीकि की रचनाओं का भी अंग्रेजी में अनुवाद किया।

2.2.3 हिन्दी के विशेष संदर्भ में अनुवाद का इतिहास

आधुनिक हिन्दी साहित्य के अग्रदूत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने संस्कृत से 'मुद्राराक्षस', बंगाली से 'विद्या सुंदर' और अंग्रेजी से 'द मर्चेंट ओफ वेनिस' जैसे नाटकों का हिन्दी में अनुवाद करके हिन्दी नाट्य अनुवाद की परंपरा का श्रीगणेश किया। शेक्सपियर के प्रसिद्ध नाटकों का गोपीनाथ, मथुराप्रसाद चौधरी और लाला सीताराम ने अनुवाद किया।

जगन्नाथ रत्नाकर ने पोप के 'एसे ऑफ क्रिटिसिज्म' का 'समालोचनादर्श' नाम से अनुवाद किया। इस समय के प्रमुख रचनाकार महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'बेकन विचार-रत्नावली' में बेकन के अनूदित निबंधों को स्थान दिया।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने आर्नोल्ड के 'लाइट ऑफ एशिया' का अनुवाद 'बुद्घचरित' नाम से किया। प्रसिद्ध कथाकार मुंशी प्रेमचंद ने टैगोर, गाल्सवर्दी, इलियट और टॉलस्टॉय की रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया। हरिवंश राय 'बच्चन' ने 'खैयाम की मधुशाला' नाम से उमर खैयाम की रूबाइयों के अंग्रेजी अनुवाद से हिन्दी में अनुवाद किया। हिन्दी के अनेक साहित्यकारों द्वारा इस प्रकार के अनुवाद

समय-समय पर प्रकाश में आते रहे हैं।

वर्तमान में आवश्यकतानुसार साहित्यिक और साहित्येतर दोनों ही प्रकार के अनुवाद संस्थागत और व्यक्तिगत माध्यम से प्रचुर मात्रा में प्रकाशित हो रहे हैं। समय की मांग को पूरा करने के लिए अनुवादकों को प्रशिक्षित किया जा रहा है। उनको अनुवाद की सैद्धांतिक जानकारी से परिचित करवाया जा रहा है, आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रीय स्तर पर कार्यशालाएँ और संगोष्ठियों का आयोजन किया जा रहा है। साहित्य अकादमी के सहयोग से प्रति वर्ष न केवल भारतीय भाषाओं के वरन् विदेशी भाषाओं की अच्छी रचनाओं का अनुवाद करके पाठकों के समक्ष रखा जाता है। भारत सरकार की ओर से अनुवाद के महत्व को बढ़ाने के लिए सन् 2008 में 'राष्ट्रीय अनुवाद मिशन' की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य भारतीय की विभिन्न भाषाओं में ज्ञान और साहित्य की सामग्री उपलब्ध करवाना है।

2.3 अनुवाद सिद्धांत : विविध चिंतन-संदर्भ

विश्व और भारतीय संदर्भ में अनुवाद के इतिहास का अध्ययन स्पष्टतः अनुवाद की प्राचीन परंपरा की ओर दिशा-निर्देश करता है। कई अनुवादकों के अनुवाद कार्य से प्राप्त अनुभव ने अनुवाद सिद्धांत के विकास में सहयोग दिया है। सदियों से चली आ रही अनुवाद की परंपरा आधुनिक समय में सैद्धांतिक रूप से अधिक सबल और स्पष्ट रूप धारण करती है। इसी विकास ने आज अनुवाद को एक विद्या शाखा (अनुशासन) के रूप में मान्यता प्रदान की है। अनुवाद के अध्ययन से पूर्व विद्वान-अनुवादकों के द्वारा पश्चिमी और भारतीय चिंतन पक्ष की चर्चा करना आवश्यक है।

2.3.1 अनुवाद सिद्धांत : पश्चिमी चिंतन

पश्चिम में अनुवाद सिद्धांत की पूर्वपीठिका ई. पू. पहली शताब्दी, रोमन युग में दृष्टिगत होती है। इस समय होरेस और सिसरो ने शब्दानुगामी और अर्थानुगामी अनुवाद में अंतर स्पष्ट किया। उन्होंने साहित्यिक कृतियों के अनुवाद में 'अर्थ

अनुसार अर्थ' को प्रधानता दी। पश्चिम में अनुवाद सिद्धांत संबंधी चिंतन का विकास मुख्यतः अंग्रेजी में बाइबिल के अनुवाद के साथ शुरू होता है और लैटिन जैसी भाषाओं में किए गए अनुवाद ने इस कार्य को गति प्रदान की। मध्यकालीन यूरोप में एक धारा शिक्षा-कर्म में अनुवाद के योगदान से संबंधित है। अनुवाद के कारण स्थानीय भाषाओं का दर्जा ऊपर उठा और उन भाषाओं के अभिव्यक्ति सामर्थ्य में भी अभिवृद्धि हुई। अनुवाद संबंधी इन विचार-चिंतन से ही अनुवाद सिद्धांत का विकास हुआ, व्यवस्थित रूप-रेखा बनी। अनुवाद सिद्धांत संबंधी विचार अनुवाद के अपने अनुभवों से निर्मित है और यही कारण है कि अलग-अलग विद्वानों के विचार अपने अनुवाद से जुड़े अनुभव की तरह भिन्न-भिन्न है। किंतु जैसे सुरेश कुमार कहते हैं सिद्धांत विकास के विभिन्न युगों में और उसकी विभिन्न धाराओं में विवाद का विषय यह रहा कि अनुवाद शब्दानुगामी हो या अर्थानुगामी, यद्यपि विवाद की भाषा बदलती रही।

पश्चिम में अनुवाद चिंतन-सिद्धांत के संदर्भ में प्रमुखतः सेंट जेरम, मार्टिन लूथर, एटिने दोलेत, जॉन ड्राइडन, एर्ल रेस्कोमेन, एलेक्जेंडर पोप, जॉर्ज कैंपबेल, एलेक्जेंडर फ्रेजर टिटलर, मैथ्यू आर्नल्ड, फिटजेराल्ड, थियोडर सेवरी, यूजेन नाइड़ा, पीटर न्यूमार्क, जेम्स होम्स, जर्मनी के लीपजिंग स्कूल, रूसी फेदेरोव, कोमिसारोव आदि का महत्वपूर्ण योगदान है। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण विद्वानों के विचार इस प्रकार है :

2.3.1.1 सेंट जेरम (347-420)

सेंट जेरम रोम के प्रसिद्ध अनुवादक थे। उन्होंने पोप दमासस के आग्रह पर ई. 384 में बाइबिल का अनुवाद किया। अनुवाद कार्य से प्राप्त अनुभव के आधार पर सर्वप्रथम उन्होंने अनुवाद सिद्धांत पर अपने विचार प्रस्तुत किए। उसने अनुवाद में 'शब्द के स्थान पर शब्द' के बदले 'भाव के स्थान पर भाव' को समर्थन दिया।

उन्होंने बाइबिल के अनुवाद में व्यावहारिक भाषा के प्रयोग का भी समर्थन किया। (Nida पृ. 14)

2.3.1.2 मार्टिन लूथर (1483-1546)

मार्टिन लूथर मध्य युग में बाइबिल के अनुवाद को बढ़ावा देने वाले प्रमुख अनुवादक थे। उन्होंने अपने समय में अनुवाद के प्रस्थापित 'शब्द के बदले शब्द' प्रणाली का विरोध करते हुए बोधगम्य भाषा-शैली को महत्व दिया और अपने विचारों को इस प्रकार अभिव्यक्त किया :

(क) शब्द-क्रम में परिवर्तन, (ख) व्याख्यात्मक क्रियापदों का प्रयोग, (ग) संयोजक शब्दों को आवश्यकता अनुसार जोड़ना, (घ) मूल पाठ के एक शब्द के लिए आवश्यकता अनुसार शब्दों, पदबंध का प्रयोग, (ङ) आलंकारिक प्रयोगों के स्थान पर अलंकार विहीन प्रयोग और अलंकार विहीन प्रयोगों के स्थान पर आलंकारिक प्रयोग, (च) धर्म संबंधी शब्द प्रयोगों का सावधानी पूर्वक इस्तेमाल और पाठ-भेद पर ध्यान देना। (Nida पृ. 15)

2.3.1.3 एटिने दोलेत (1509-1546)

नाइडा (Nida पृ. 16) के अनुसार अनुवाद संबंधी सिद्धांत परंपरा को प्रस्थापित करने का श्रेय फ्रांस के अनुवाद-चिंतक एटिने दोलेत को ही दिया जाना चाहिए। दोलेत ने सन् 1540 में प्रकाशित अपने निबंध 'The Way to Translate Well from One Language into Another' में अनुवाद के संदर्भ में मुख्य पाँच तरह के दिशा-निर्देश किए :

क) अनुवादक को मूल पाठ को अच्छी तरह से समझना चाहिए।

ख) अनुवादक को मूल भाषा अर्थात् स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

ग) अनुवादक को 'शब्द-प्रति-शब्द' अनुवाद से दूर रहना चाहिए जिससे मूल अर्थ

को क्षति न पहुँचे।

घ) अनुवादक को आम व्यवहार की भाषा का प्रयोग करना चाहिए।

ङ) अनुवादक को ऐसे शाब्दिक व्यवहार का प्रयोग करना चाहिए जिससे मूल पाठ का समग्र प्रभाव उत्पन्न हो।

2.3.1.4 जॉन ड्राइडेन (1631-1700)

जॉन ड्राइडेन अनुवाद को कला के रूप में स्वीकार करता है। उसने अनुवाद के तीन भेद (स्तर) (Nida से उद्धृत, पृ. 17) किए :

क) शब्दानुवाद (मैटाफ्रेज़) - शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद ।

ख) भावानुवाद (पैराफ्रेज़) - भाव के लिए भाव द्वारा अनुवाद ।

ग) अनुकरण (इमिटेशन) - कृति की आत्मा बनाए रखने के लिए मूल के शब्द और अर्थ दोनों को छोड़ने की स्वतंत्रता।

इन तीनों भेदो में से जॉन ड्राइडेन भावानुवाद को ज्यादा उचित मानता है।

2.3.1.5 जॉर्ज कैंपबेल (1719-1796)

जोर्ज कैंपबेल ने सन् 1789 में 'The four gospels' का प्रकाशन करके अनुवाद का इतिहास और सिद्धांत के विषय में अपने विचार प्रस्तुत किए। उन्होंने उत्तम अनुवाद के लिए तीन आधारभूत नियमों (Nida से उद्धृत, पृ. 18) पर विशेष बल दिया है :

क) मूल के भाव को अनुवाद में प्रस्तुत करना।

ख) लक्ष्य भाषा की प्रकृति एवं लेखक के भाव और शैली का अनुवाद में सातत्य बनाए रखना।

ग) मूल के गुणों को बनाए रखने की कोशिश करना, अनुवाद को सरल और स्वाभाविक बनाना।

2.3.1.6 लॉर्ड वुडहाउज़ली (1747-1813)

लॉर्ड वुडहाउज़ली ने अनुवाद कला की तुलना चित्रकला से करते हुए कहा कि अनुवादक को मात्र मूल के रंगों का प्रयोग ही नहीं करना है वरन् वैसा ही प्रभाव अनूदित रचना में लाना है। उन्होंने अनुवाद पर तीन महत्वपूर्ण विचार (Nida से उद्धृत, पृ. 19) प्रस्तुत किए :

क) अनुवाद में मूल का पूरा भाव आना चाहिए।

ख) अनुवाद में लेखन का तरीका और शैली मूल सामग्री के समान ही होनी चाहिए।

ग) अनुवाद में मूल रचना की समस्त सरलता निहित होनी चाहिए।

2.3.1.7 जे. सी. कैटफोर्ड (1917-2009)

इंग्लैंड में अनुवाद सिद्धांत के महत्वपूर्ण योगदान कर्ता जे. सी. कैटफोर्ड है। कैटफोर्ड ने अनुवाद में भाषा-विज्ञान को महत्वपूर्ण स्थान दिया। उन्होंने हैलिडे द्वारा दिए गए सामान्य भाषा-विज्ञान के नियमों के आधार पर अपना अनुवाद सिद्धांत प्रस्तुत किया और इसे तुलनात्मक भाषा-विज्ञान की एक शाखा मानने का समर्थन किया। कैटफोर्ड ने 'A Linguistic theory of Translation' में शुद्ध भाषा-वैज्ञानिक आधार पर अनुवाद के प्रारूपों का निरूपण किया, अनुवाद परिवृत्ति का भाषा-वैज्ञानिक विवरण दिया तथा अनुवाद की सीमाओं पर विचार किया। (कुमार पृ. 37) कैटफोर्ड के सिद्धांत अनुसार अनुवाद कार्य की मुख्य समस्या लक्ष्य भाषा में समतुल्य खोजने की है।

कैटफोर्ड ने अनुवाद में अर्थ के महत्व पर विशेष बल दिया है। उसके अनुसार "अनुवाद सिद्धांत के लिए, अर्थ का सिद्धांत अतिआवश्यक है, ऐसे सिद्धांत के बिना अनुवाद प्रक्रिया के महत्वपूर्ण पहलुओं की चर्चा नहीं की जा सकती।" (Catford पृ. 35)

कैटफोर्ड ने अनुवाद में दो प्रकार के परिवर्तनों की बात की है : (क) प्रथम, सतह के आधार पर और द्वितीय, वर्ग-इकाइयों के आधार पर। उसने अनुवाद कार्य में भाषा रूपों का ध्यान रखते हुए स्रोत भाषा की विशिष्ट शैली और शब्दावली को लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करना आवश्यक माना। उसका मानना है कि अन-अनुवादनीयता दो संदर्भों में होती है : (क) जब स्रोत भाषा की व्यावहारिक इकाइयों का लक्ष्य भाषा की व्यवहारिक इकाइयों के साथ ताल-मेल बिठाना संभव नहीं होता और (ख) जब स्रोत भाषा की सांस्कृतिक इकाइयों का लक्ष्य भाषा की सांस्कृतिक इकाइयों के समतुल्य या समीप समतुल्य पाना संभव नहीं होता।

2.3.1.8 थियोडर सेवरी (1896-1980)

सेवरी ने अनुवाद संबंधी विचार 'The Art of Translation' में व्यक्त किए है। उसका मानना है कि अनुवाद मूल रचना की तरह स्वयं को प्रस्तुत करने में सक्षम होना चाहिए, उसमें मूल के जैसी ताजगी होनी चाहिए। अनुवाद ऐसा हो कि सरलता और आनंद से पढ़ा जा सके।

सेवरी अनुवादक के कार्य को मूल लेखक के कार्य से ज्यादा कठिन मानता है। मूल लेखक अपने भाव-विचारों को अपनी भाषा में अभिव्यक्त करता है जबकि अनुवादक को मूल लेखक और उसके पाठकों के साथ-साथ अपने पाठकों को ध्यान में रखकर मूल भाव के समीप समतुल्य का सहारा लेना होता है। ऐसा करते हुए यदि अनुवादक को समस्या होती है तो उसे स्वयं से यह तीन प्रश्न पूछकर अपनी समझ के अनुसार काम लेना चाहिए : (क) लेखक ने क्या कहा है? (ख) उसके कहने का अर्थ क्या है? (ग) उसने उसे कैसे कहा है?

सेवरी के विचार से अनुवाद के नियम पर कोई भी विधान देना असंभव है क्योंकि अब तक विद्वानों द्वारा अनुवाद सिद्धांत पर दिये गए मंतव्यों में परस्पर विरोध देखा जा सकता है। सेवरी ने ऐसे परस्पर विरोधी छह मंतव्यों का उल्लेख

किया है : (Savory पृ. 50-51)

1 (क) अनुवाद शब्दानुगामी होना चाहिए।

(ख) अनुवाद अर्थानुगामी होना चाहिए।

2 (क) अनुवाद मौलिक रचना जैसा लगना चाहिए।

(ख) अनुवाद अनुवाद जैसा लगना चाहिए।

3 (क) अनुवाद में मूल की शैली प्रतिबिंबित होनी चाहिए।

(ख) अनुवाद में अनुवादक की निजी शैली होनी चाहिए।

4 (क) अनुवाद मूल का समकालीन लगना चाहिए।

(ख) अनुवाद अनुवादक के समकालीन लगना चाहिए।

5 (क) अनुवाद में कुछ जोड़ा या घटाया जा सकता है।

(ख) अनुवाद में कुछ भी जोड़ा या घटाया नहीं जा सकता।

6 (क) कविता का अनुवाद गद्‌य में होना चाहिए।

(ख) कविता का अनुवाद पद्‌य में होना चाहिए।

सेवरी द्‌वारा रेखांकित परस्पर विरोधी इन छः मंतव्यों में लेखक के पाठ के स्थान पर पाठक अर्थात् अनुवादक के पाठ की प्रधानता वाली अनुवाद अध्ययन की उत्तर-आधुनिक समझ को देखा जा सकता है।

2.3.1.9 यूजेन नाइडा (1914-2011)

यूजेन नाइडा अनुवाद सिद्धांत की अमेरिकी परंपरा के सबसे प्रभावशाली विद्‌वान है। उनका दृष्टिकोण समाज-भाषाविज्ञान पर आधारित है और अनुवाद सिद्धांत पाठक केन्द्रित है। नाइडा का सिद्धांत रूपांतरक प्रजनक व्याकरण (ट्रांसफरमेशनल जेनेरेटिव ग्रामर) के फ्रेमवर्क पर आधारित है। उसका यह सिद्धांत बाइबिल के अनुवाद से प्राप्त अनुभव पर आधारित है, जो पुस्तक के रूप में 1964 और 1969 में प्रकट हुआ। नाइडा ने अनुवाद की प्रक्रिया, अनुवाद के प्रकार, अनुवादक की भूमिका, अनुवाद की

समस्याओं आदि पर अपने विचार प्रकट किए है।

नाइडा ने अनुवाद को स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की सतही संरचनाओं की परस्पर परिवर्तित प्रक्रिया बताते हुए अनुवाद के तीन स्तरों (Nida पृ. 7) का उल्लेख किया :

क) स्रोत पाठ का सार में संक्षिप्तीकरण।

ख) स्रोत भाषा के अर्थ का लक्ष्य भाषा में स्थानांतरण।

ग) स्रोत भाषा की शैलीगत एवं अर्थगत अभिव्यक्तियों का लक्ष्य भाषा में पुनः उत्पादन।

नाइडा अनुवाद में शब्दों के सांकेतिक व्यावहारिक अर्थ को महत्वपूर्ण मानता है। इस प्रकार वह अनुवाद के व्यावहारिक (Pragmatic) सिद्धांत की नींव रखता है। वास्तव में नाइडा का अनुवाद चिंतन बाइबिल के अनुवाद कार्य पर आधारित है। यही नाइडा के चिंतन को सीमित भी करता है।

2.3.1.10 पीटर न्यूमार्क (1916-2011)

पीटर न्यूमार्क अनुवाद को कौशल मानता है, "अनुवाद ऐसा कौशल है जिसमें एक भाषा में लिखित संदेश या कथन को अन्य भाषा के वैसे ही लिखित संदेश या कथन से परिवर्तित किया जाता है।" (Approaches to Translation पृ. 7)

न्यूमार्क स्रोत पाठ को लक्ष्य पाठ में परिवर्तित करने में अंतर्ज्ञान की प्रक्रिया को महत्वपूर्ण बताते हुए तुलनात्मक भाषाविज्ञान पर बल देता है। इसमें भी अर्थ धारणात्मक होने के कारण वह अनुवाद का संबंध संकेतविज्ञान (Semiotics) से जोड़ता है।

न्यूमार्क द्वारा प्रदत्त अनुवाद सिद्धांत नाइडा के अनुवाद सिद्धांत की तरह व्यवहारिक (Pragmatic) और संवादमूलक (discourse oriented) है। न्यूमार्क ने नाइडा के विपरीत पाठ प्रारूप भेद के अनुसार विशिष्ट अनुवाद प्रणाली प्रस्तुत की। उसने

विभिन्न पाठ-प्रकारों को मान्यता दी और प्रत्येक पाठ के लिए अनुवाद के दो प्रकार - भावार्थ-परक (semantics) अनुवाद और संप्रेषण-परक (communicative) अनुवाद बताये। उसका मानना है कि भावार्थ-परक अनुवाद सटिक हो सकता है पर वह पाठ को अच्छी तरह संप्रेषित नहीं कर सकता और संप्रेषण-परक अनुवाद पाठ को अच्छी तरह संप्रेषित करता है पर वह अधिक सटीक नहीं हो सकता। न्यूमार्क अनुवाद की प्रक्रिया में तीन चरणों (A Textbook of Translation पृ. 56) को महत्वपूर्ण मानता है।

क) स्रोत भाषा के पाठ की व्याख्या और विश्लेषण करना।

ख) लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के शब्दों और वाक्यों के समतुल्य का चयन करना।

ग) लेखक के आशय, पाठक की अपेक्षा और लक्ष्य भाषा के उपयुक्त नियमानुसार पाठ को पुनः नियोजित करना।

न्यूमार्क का अनुवाद सिद्धांत में महत्वपूर्ण योगदान है : अनुवाद की अर्थ-केन्द्रित (मूल भाषा पाठ केन्द्रित) तथा संप्रेषण केन्द्रित (अनुवाद के पाठक पर केन्द्रित) प्रणाली की संकल्पना।

2.3.1.11 जेम्स होम्स (1924-1986)

सर्वप्रथम जेम्स होम्स ने सन् 1972 में 'The name and nature of translation studies' लेख में अनुवाद अध्ययन (Translation Studies) की शुरूआत पर संसार का ध्यान केन्द्रित किया और इसी के साथ अनुवाद से जुड़े मूल तत्वों की समझ में व्यापक बदलाव आया। अनुवाद अध्ययन से संबंधित जेम्स होम्स के विचारों का अधिक अध्ययन 'अनुवाद में उत्तर-आधुनिकता' शीर्षक से आगे किया गया है।

कुल मिलाकर पश्चिमी चिंतन परंपरा के अनेक विद्वानों ने अनुवाद कार्य से प्राप्त अनुभव और अनुवाद के विशेष अध्ययन से अनुवाद के सिद्धांत निर्धारित करने वाले महत्वपूर्ण विचारों एवं तथ्यों को प्रस्तुत किया है। इसके बावजूद अनुवाद कार्य में

उपस्थित हो रही समस्याओं से जुड़े प्रश्न जहाँ के तहाँ है। सेवरी द्वारा अनुवाद संबंधी विरोधाभाषी मंतव्यों को लेकर उठाए गए प्रश्नों का भी कोई ठोस उत्तर प्राप्त नहीं हो सका है। यह सब प्रश्न अनुवाद की मूलगामी अवधारणाओं को ठोस दिशा-निर्देश देने की आवश्यकता की ओर संकेत करते हैं।

2.3.2 अनुवाद सिद्धांत : भारतीय चिंतन

भारत में अनुवाद की परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है। व्याख्या या टीका के रूप में संस्कृत ग्रंथों के अन्तःभाषिक अनुवाद का इतिहास सर्वविदित है, इसके बावजूद अनुवाद सिद्धांत संबंधी विचार-चिंतन के प्रमाण आज अनुपलब्ध है। वस्तुतः अनुवाद पर सैद्धांतिक चिंतन आधुनिक काल के अनुवादकों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। भूमंडलीकरण के दौर में अनुवाद की अनिवार्यता के कारण भारत के अनेक विश्वविद्यालय तथा संस्थाएँ अनुवाद संबंधी कार्य उत्साहपूर्वक कर रही हैं। यहाँ अनुवाद सिद्धांत संबंधी भारतीय अनुवादकों द्वारा प्रस्तुत विचारों का संक्षिप्त प्रस्तुतीकरण किया जा रहा है।

अनुवाद के संबंध में भारतीय विचारकों का चिंतन देखने से पूर्व हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद सिद्धांत के क्रमिक विकास को लेकर प्रो. जी. गोपीनाथन (Gopinathan) द्वारा प्रस्तुत किया गया विश्लेषण देखना अनुचित न होगा।

2.3.2.1 पुनः सृजन की परंपरा

भारतीय भाषाओं में रूपांतरण की परंपरा प्राचीन समय से चली आ रही है। समय-समय पर रामायण, महाभारत आदि प्राचीन साहित्य का भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया गया है। वास्तव में यह सब अनुवाद न होकर रूपांतरण थे जो तत्कालीन समाज को आध्यात्मिक शिक्षा देने के उद्देश्य से किए गए थे। तुलसीदास ने रामायण के प्रारंभ में लिखा है कि वे संस्कृत में रचित रामायण के आधार पर

स्थानिक भाषा में रामायण लिख रहे हैं। आधुनिक समय में टैगोर, श्री अरविंद, ए. के. रामानुज, हरिवंशराय बच्चन, अज्ञेय आदि रचनाकारों ने कई रूपांतरण भी किए हैं।

रूपांतरण एक ही सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर आधारित साहित्य का श्रेष्ठ हल हो सकता है। इस संदर्भ में रूपांतरण एक तरह से मूल कृति का पुनः जन्म या पुनः अवतार है। फिर भी समस्त रूप में रूपांतरण नई रचना नहीं है क्योंकि मूल कृति और अनूदित कृति में एक तार्किक संबंध अवश्य होता है।

2.3.2.2 अनुवाद का राष्ट्रवादी सिद्धांत

भारतीय नवजागरण काल में राष्ट्रवाद की भावना प्रबल हो गई। भारत में ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार की अनुमति ने भारतीय भाषा में बाइबिल के अनुवाद को गति प्रदान की। एक तरफ अनुवादों ने साहित्य में आदर्श गद्य का उदाहरण प्रस्तुत किया, वहीं दूसरी तरफ भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की पुनः स्थापना में लगे राष्ट्रवादियों के समक्ष अनेक चुनौतियाँ खड़ी हो गई। इस सांस्कृतिक संकट से बाहर निकलने के लिए समाज-सुधारकों और राष्ट्रीय स्तर के नेताओं ने परिष्कृत गद्य में भारतीय संस्कृति के संवाहक साहित्य का विपुल मात्रा में अनुवाद किया।

राम मोहन राय ने वेदों और उपनिषदों का सरल बंगाली गद्य में अनुवाद किया। दयानंद सरस्वती ने 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना की। लोकमान्य तिलक और गांधीजी ने राजनीतिक उद्देश्य से भगवद् गीता का अनुवाद किया।

सुप्रसिद्ध रचनाकार भारतेन्दु ने भारतीय भाषाएँ - संस्कृत, प्राकृत और बंगाली तथा विदेशी भाषा अंग्रेजी से साहित्यिक कृतियों का अनुवाद किया। सुभ्रमण्यम भारती ने विदेशी कृतियों का तमिल में अनुवाद किया। श्री अरविंद ने संस्कृत ग्रंथों के अनुवाद में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसके साथ श्री अरविंद ने अपने लेखों में - 'अनुवाद में स्वतंत्रता', 'गद्य का पद्य में अनुवाद', बंगाली अनुवादों पर टिप्पणियों आदि के द्वारा अनुवाद के सैद्धांतिक पक्ष पर भी अपने विचार प्रस्तुत किए।

2.3.2.3 अनुवाद में भारतीय काव्यशास्त्र संबंधी स्रोत का प्रयोग

वर्तमान समय में 'ध्वनि' (suggestive meaning) और 'औचित्य' (appropriateness) जैसे भारतीय काव्यशास्त्रीय सिद्धांतों का प्रयोग अनुवाद के मानदंड के रूप में किया जा रहा है। वैदिक समय से ही शाब्दिक अर्थ के स्थान पर सूक्ष्म अर्थ को महत्व दिया गया है। 'ऋग्वेद संहिता' (687) में कहा गया है कि जो व्यक्ति काव्य का सिर्फ शाब्दिक अर्थ देखता है, वह देखते हुए भी नहीं देखता है, सुनते हुए भी नहीं सुनता है। जो व्यक्ति शाब्दिक अर्थ से आगे निकलता है और सूक्ष्म अर्थ समझता है, वाणी उसके आगे स्वयं को ऐसे प्रकट करती है जैसे प्रिय पत्नी पति के समक्ष स्वयं को प्रकट करती है। आनंदवर्धन (नौवीं शताब्दी) 'ध्वनि सिद्धांत' को प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि 'ध्वनि' शब्द की वह क्षमता है जो उसके शाब्दिक अर्थ और अभिव्यक्त अर्थ के अतिरिक्त सुंदर भाव देती है। उन्होंने ध्वनि को काव्य की आत्मा बताया है। वर्तमान में 'ध्वनि सिद्धांत' पर गोपीनाथन (अनुवाद सिद्धांत अनुप्रयोग) और निरंजन मोहंती (Indian Epistemology) द्वारा किए गए अभ्यास ने अनुवाद की समस्याओं के अध्ययन में 'ध्वनि सिद्धांत' के प्रयोग की आवश्यकता को उजागर किया है।

अनुवाद में औचित्य सिद्धांत का अध्ययन भी महत्वपूर्ण है। सन् 1996 में अवधेशकुमार सिंह ने 'Translation : Its Theories and Practices' की प्रस्तावना में अनुवाद में औचित्य सिद्धांत की भूमिका पर प्रकाश डाला है।

2.3.2.4 पश्चिमी और पूर्वी विचारों का संमिश्रण

हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं का समकालीन अनुवाद सिद्धांत-साहित्य पश्चिमी और भारतीय विचारों का संमिश्रण प्रस्तुत करता है। पश्चिमी विद्वान कैटफोर्ड, नाइडा, जैकब्सन आदि के भाषाई मॉडल और अनुवाद सिद्धांतों से भोलानाथ तिवारी (अनुवाद विज्ञान), रवींद्रनाथ श्रीवास्तव (अनुवाद : सिद्धांत और समस्याएँ),

सुरेश कुमार (अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा), कैलाशचंद्र भाटिया आदि प्रभावित हुए हैं। गोपीनाथन (अनुवाद सिद्धांत अनुप्रयोग और The Problems of Trunslation) अनुवाद प्रक्रिया में भारतीय और पश्चिमी विचारों का एक संमिश्रण करते हुए इसे मेटासाइकोसिस (metaphychosis) के रूप में परिभाषित करते हैं।

कुल मिलाकर अनुवाद सिद्धांत के विकास में भारतीय काव्यशास्त्र और भाषाविज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। समकालीन समय में भारत में स्थापित 'अनुसारका' जैसे कंप्यूटर अनुवाद सिद्धांत पश्चिमी और पूर्वी विचारों के संमिश्रण का उदाहरण ही प्रस्तुत कर रहे हैं। यह संमिश्रण वैश्विक परिप्रेक्ष्य में अनुवाद के भारतीय सिद्धांत को विकसित करने में और अधिक उपयोगी हो सकता है।

2.3.3 अनुवाद संबंधी विचार : हिन्दी के विशेष संदर्भ में

अनुवाद सिद्धांत की पश्चिमी और भारतीय चिंतन परंपरा को रेखांकित करने के पश्चात् हिन्दी के विशेष संदर्भ में अनुवाद चिंतन का अध्ययन किया जा सकता है। हालाँकि हिन्दी में अनुवाद चिंतन परंपरा न तो उतनी प्राचीन है जितनी पश्चिम में है। फिर भी अनुवादकों ने अनुवाद कार्य करते समय प्राप्त अनुभवों को अपनी कृतियों की भूमिकाओं, लेखों आदि में रेखांकित किया है तथा अनुवाद सिद्धांत को लेकर अब कुछ पुस्तकें भी उपलब्ध हुई है। अनुवाद के संदर्भ में उनके द्वारा व्यक्त विचारों के आधार पर हिन्दी में अनुवाद चिंतन पर अध्ययन किया जा सकता है। इस संदर्भ में भारतेन्दु हरिश्चंद्र, महावीरप्रसाद द्विवेदी, श्रीधर पाठक, मैथिलीशरण गुप्त, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हरिवंशराय बच्चन, भोलानाथ तिवारी, गार्गी गुप्त आदि के विचारों को संक्षेप में देखा जा सकता है।

2.3.3.1 भारतेन्दु हरिश्चंद्र (1850-1885)

हिन्दी साहित्य में आधुनिक युग के जनक भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने मौलिक रचनाओं के साथ विविध भाषाओं की कृतियों का हिन्दी में अनुवाद करते हुए नई

विधाओं को हिन्दी साहित्य में स्थान दिया है। भारतेन्दु ने संस्कृत से 'मुद्राराक्षस' और 'रत्नावली'; बंगाली से 'विद्यासुंदर'; अंग्रेजी से शेक्सपियर के 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का 'दुर्लभ बंधु' नाम से अनुवाद किया। भारतेन्दु विविध भाषाओं के श्रेष्ठ साहित्य से चुनी हुई रचनाओं के छोटे-बड़े विषयों को हिन्दी में ले आये।

भारतेन्दु ने अर्थ का अनर्थ करने वाले शब्दानुगामी अनुवाद से बचने की बात करते हुए कहा कि "मूल कवि से हृदय मिलाएँ बिना अनुवाद करना शुद्ध झक मारना ही नहीं, कवि की लोकांतर-स्थित आत्मा को नरक-कष्ट देना भी है।" (सिंहल से उद्धृत पृ. 13) वे अनुवाद में अर्थानुगामिता के पक्षधर थे। मूल कृति का अनुवाद इस तरह किया जाए जिसे लक्ष्य भाषा का पाठक पढ़कर मौलिक रचना जैसा आनंद प्राप्त कर सके।

2.3.3.2 महावीरप्रसाद द्विवेदी (1864-1938)

महावीरप्रसाद द्विवेदी ने संस्कृत और अंग्रेजी रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया और इन अनुवादों में लिखी गईभूमिका के माध्यम से अनुवाद के सैद्धांतिक पक्ष पर अपने विचार (सिंहल से उद्धृत पृ. 13-14) प्रस्तुत किए :

क) काव्य का अनुवाद करने के लिए अच्छा कवि होना आवश्यक है और अनुवाद आरंभ करने से पूर्व अनुवादक को स्वयं की योग्यता का परीक्षण कर लेना नितांत आवश्यक है।

ख) शब्दानुवाद की अपेक्षा भावानुवाद अधिक उचित है।

ग) मूल का मतलब अच्छी तरह समझाने के लिए अनुवादक को कुछ घटाने-बढ़ाने की स्वतंत्रता है।

2.3.3.3 श्रीधर पाठक (1859-1928)

श्रीधर पाठक ने 'श्री गोपिका गीत' नाम में श्रीमद् भागवत के 'दशम् स्कंध' के इकतीसवें अध्याय का हिन्दी में अनुवाद किया। साथ ही अंग्रेजी के प्रसिद्ध रचनाकार

ओलिवर गोल्डस्मिथ की रचनाएँ 'ट्रैवेलर', 'डेजर्टेड विलेज' और 'हरमिट' का क्रमशः 'श्रांतपथिक', 'उजड़ग्राम', 'एकांतवासी योगी' के नाम से हिन्दी में अनुवाद किया। 'उजड़ग्राम' की भूमिका में उन्होंने अनुवाद संबंधी अपने विचार (श्रीधर, उजड़ ग्राम की भूमिका पृ. 5-6) प्रस्तुत किए हैं :

क) एक देश के काव्य का, जिसमें वहाँ की संस्कृति की बातें हो, दूसरे देश की भाषा के पद्य में पूर्णतः अनुवाद कर पाना यदि असंभव नहीं है तो भी अत्यंत कठिन कार्य अवश्य है।

ख) वाक्य-प्रति-वाक्य अनुवाद करने से त्रुटि की संभावना अधिक रहती है।

ग) अनूदित पाठ को सहज और रोचक बनाने हेतु अनुवादक को मूल पाठ में परिवर्तन की स्वतंत्रता दी जा सकती है।

2.3.3.4 मैथिलीशरण गुप्त (1886-1964)

मैथिलीशरण गुप्त के द्वारा अनूदित कृतियों में संस्कृत से 'मेघनाथ वध' और अंग्रेजी से 'उमर खैयाम की रूबाइयाँ' उल्लेखनीय हैं। अनुवाद पर अपना विचार स्पष्ट करते हुए वह 'मेघनाथ वध' की भूमिका में लिखते हैं कि "जहाँ तक हो सके, अनुवाद में मूल भावों की रक्षा करने की कोशिश करनी चाहिए।" (गुप्त पृ. 25-26) रूबाइयों के अनुवाद में उन्होंने इस बात का बराबर ध्यान रखा हैं।

2.3.3.5 आचार्य रामचंद्र शुक्ल (1884-1940)

हिन्दी के सुप्रसिद्ध आलोचक, इतिहासकार और लेखक आचार्य रामचंद्र शुक्ल का अनुवाद के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने अंग्रेजी और बंगाली रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया है जिसमें मेगास्थनिज़ के 'द इंडिका' का 'मेगास्थनीज़ का भारतवर्षीय वर्णन', एडम्स के 'प्लेन लिविंग, हाई थिंकिंग' का 'आदर्श जीवन' हैकल के 'रिडल ओफ द युनिवर्स' का 'विश्व प्रपंच' और आर्नल्ड के 'लाइट ऑफ एशिया' का 'बुद्धचरित' नाम से किए गए अनुवाद बहुत प्रसिद्ध है।

अनुवाद के संबंध में शुक्ल जी के विचार इस प्रकार है:

क) शब्दानुवाद की अपेक्षा भावानुवाद ज्यादा ठीक है।

ख) यथास्थिति मूलनिष्ठ या मूलमुक्त अनुवाद किया जा सकता है।

ग) अनुवाद करते समय देश-काल, संस्कृति, भाषा आदि में छूट ली जा सकती है। वे कहते हैं, "इस देश के रीति-रिवाजों के अनुकूल करने के लिए और भी बहुत-सी बातें घटाई-बढ़ाई जा सकती है।" (सिंहल से उद्धृत पृ. 16)

घ) अनूदित रचना में स्रोत भाषा का प्रभाव दिखना नहीं चाहिए। कौन-सा वाक्य किस अंग्रेजी वाक्य का अक्षरशः अनुवाद है, इसका पता लगाने की जरूरत किसी को न होगी। (शुक्ल)

2.3.3.6 हरिवंशराय बच्चन (1907-2003)

हरिवंशराय बच्चन द्वारा किए गए अनुवादों में 'खैयाम की मधुशाला', 'मैकबैथ', 'हैमलेट', 'जनगीता', 'भाषा अपनी, भाव पराए' आदि महत्वपूर्ण है। उन्होंने इन अनुवादों द्वारा हिन्दी अनुवाद चिंतन परंपरा को एक सुदृढ़ आधार दिया है। उन्होंने खैयाम की रूबाइयों के फिट्जेराल्ड द्वारा किए गए अंग्रेजी अनुवाद से हिन्दी में अनुवाद करते समय अर्थानुगामिता को ही महत्व दिया। वे लिखते हैं, "अपने अनुवाद के विषय में मुझे केवल इतना कहना है कि मैं शब्दानुवाद करने के फेर में नहीं पड़ा। भावों को ही मैंने प्रधानता दी है।" (हरिवंशराय पृ. 48)

2.3.3.7 भोलानाथ तिवारी (1923-1989)

डॉ. भोलानाथ तिवारी नाम जितना भाषाविज्ञान के क्षेत्र में प्रसिद्ध है उतना ही अनुवाद के क्षेत्र में उनका चिंतन प्रसिद्ध है। उनके अनुवाद संबंधी चिंतन 'अनुवाद विज्ञान', 'काव्यानुवाद की समस्याएँ', 'अनुवाद कला', 'अनुवाद की व्यावहारिक समस्याएँ', 'भारतीय भाषाओं में अनुवाद की समस्या' आदि पुस्तकों में उपलब्ध होता है। भोलानाथ तिवारी अनुवाद में मूल कृति से अधिक निकटता और लक्ष्य भाषा में

अभिव्यक्ति की सहजता के समन्वय को महत्व देते हैं। वह मानते हैं कि किसी भी साहित्यिक कृति का पूर्णतः अनुवाद संभव नहीं है, "साहित्यिक अनुवाद में पूर्णता की अपेक्षा अधिकतम निकटता ही संभव होती है।" (सिंहल से उद्धृत, पृ. 18) वे साहित्यिक और साहित्येतर अनुवाद के अंतर को स्पष्ट करते हुए वैज्ञानिक साहित्य के अनुवाद में विषय की जानकारी आवश्यक मानते हैं। साथ ही उनके अनुसार "सृजनात्मक साहित्य का अनुवाद केवल सहज एवं सृजनात्मक प्रतिभायुक्त अनुवादक ही कर सकता है, जबकि साहित्येतर विषयों का अनुवाद अभ्यास विषय-ज्ञान और शब्द-भण्डार के द्वारा आसानी से किया जा सकता है।" (सिंहल से उद्धृत, पृ. 18) भोलानाथ तिवारी अनुवाद कार्य में अर्थ संप्रेषित करते समय कुछ जोड़ने और छोड़ने का स्वीकार करते हैं।

2.3.3.8 गार्गी गुप्त (1929-1998)

गार्गी गुप्त ने अनुवाद के चिंतन पक्ष का विशद अभ्यास करते हुए हिन्दी अनुवाद चिंतन परंपरा को सबल बनाया है। उनके अनुसार कविता को ज्यों का त्यों दूसरी भाषा में स्थानांतरित कर ही नहीं सकते। भाषा विशेष के लाक्षणिक प्रयोगों को अनूदित करना प्रायः असंभव-सा है। उनके अनुसार अनुवाद में सबसे बड़ी समस्या मूल पाठ के सामाजिक-सांस्कृतिक तत्वों के स्थानांतरण में होती है। वे कहती हैं, "यदि मूल कृति के देश अथवा प्रदेश की भाषा एवं संस्कृति दूसरी भाषा एवं संस्कृति से मिलती-जुलती हो तब तो अनुवाद करना अपेक्षाकृत आसान हो जाता है। सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक दूरी जितनी बढ़ती जाती है, अनुवाद की कठिनता उतनी ही बढ़ती जाती है।" (आरसु पृ. 34)

कुल मिलाकर भारतीय संस्कृति में अनुवाद की परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है और आज भी यह रचनाकारों को प्रभावित कर रही है। हिन्दी में विकसित हो रहे अनुवाद के सैद्धांतिक पक्ष पर एक तरफ भारतीय काव्यशास्त्र के ध्वनि एवं

औचित्य सिद्धांत के प्रभाव दृष्टिगत होते हैं वहीं पश्चिमी अनुवाद चिंतन का व्यापक प्रभाव भी परिलक्षित होता है। हिंदी और अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद कार्य की लंबी परंपरा रही है लेकिन अनुवाद के सिद्धांत पर चिंतनात्मक कार्य आधुनिक युग से प्रारंभ होता है। जो आज साहित्य के अनुवाद से प्राप्त अनुभव एवं चिंतन के सूक्ष्म विवेचन और विश्लेषण से क्रमशः विकसित हो रहा है।

2.4 अनुवाद और उत्तर-आधुनिकता

अनुवाद का चिंतन पक्ष और विकास-क्रम का अध्ययन करने के पश्चात् अनुवाद को निम्न तीन हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है :

1. अनुवाद कार्य (Translation) : यह अनुवाद से संबद्ध सबसे प्राचीन स्वरूप है। पहले सिर्फ अनुवाद कार्य होता था। बाद में अनुवाद के सिद्धांत बने।

2. अनुवाद सिद्धांत (Translatology) : अनुवाद कार्य से प्राप्त अनुभवों के आधार पर विद्वानों ने अनुवाद के सिद्धांत को प्रस्थापित किया, जैसे अनुवाद की परिभाषा, अनुवाद का स्वरूप, अनुवाद कला-विज्ञान-कौशल, अनुवाद की प्रक्रिया, मूल्यांकन आदि। इससे अनुवाद को वैज्ञानिक आधार मिला, अनुवाद विज्ञान की संकल्पना स्पष्ट हुई और इसके लिए एक नया शब्द उपयोग में आने लगा- Translatology जिसे हिन्दी में अनुवाद-विज्ञान कहा जाता है। इस प्रकार अनुवाद की सैद्धांतिकी तैयार हुई।

3. अनुवाद अध्ययन (Translation Studies) - उत्तर-आधुनिकता के आने के बाद अनुवाद-अध्ययन जैसे शब्द की चर्चा होने लगी है। सन् 1972 में जेम्स होम्स ने 'The name and nature of translation studies' लिखकर अनुवाद अध्ययन की शुरूआत की। आज यह विमर्श का पर्याय बन गया है।

इस प्रकार अनुवाद का कार्य प्राचीन समय से होता रहा है। पहले केवल अनुवाद कार्य होता था जब उसका शास्त्र निर्मित हुआ तो वह अनुवाद-विज्ञान हुआ और उत्तर-आधुनिकता के बाद इसका विकास अनुवाद–अध्ययन के रूप में हुआ।

अनुवाद अध्ययन पर चर्चा करते हुए सर्वप्रथम जेम्स होम्स ने अनुवाद अध्ययन के अंतर्गत कौन-कौन से पहलुओं को समाविष्ट किया जा सकता है, इसकी स्पष्ट रूपरेखा प्रस्तुत की। उसने अनुवाद अध्ययन का संबंध अनुवाद उत्पादन और अनुवाद वर्णन से जोड़ते हुए गहन चिंतन को प्रस्तुत किया। वस्तुतः अनुवाद अध्ययन ऐसा सिद्धांत है जो अनुवाद उत्पादन के लिए मार्ग-दर्शक बनता रहा है। अनुवाद अध्ययन को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है : (क) शुद्ध अनुवाद अध्ययन और (ख) प्रायोगिक अनुवाद अध्ययन। (Holmes)

(क) शुद्ध अनुवाद अध्ययन

शुद्ध अनुवाद अध्ययन में अनुवाद के स्वरूप, प्रक्रिया आदि सैद्धांतिक पक्ष का अध्ययन किया जाता है। इसे सैद्धांतिक अनुवाद अध्ययन तथा वर्णनात्मक अनुवाद अध्ययन में विभाजित किया जा सकता है।

1 सैद्धांतिक अनुवाद अध्ययन : इसमें निम्न दो प्रकार के अनुवाद अध्ययन को शामिल किया जा सकता है :

(i) सामान्य अनुवाद अध्ययन और (ii) आंशिक अनुवाद अध्ययन

अनुवाद को कई आयाम मर्यादित करते हैं। इन बाधाओं के कारण आंशिक अनुवाद ही संभव हो पाता है। अनुवाद को प्रभावित करने वाले निम्नलिखित आयामों का समावेश आंशिक अनुवाद में किया जा सकता है :

क) माध्यम द्वारा मर्यादित

ख) क्षेत्र द्वारा मर्यादित

ग) रेंक द्वारा मर्यादित

घ) पाठ द्वारा मर्यादित

ङ) समय द्वारा मर्यादित

च) समस्या द्वारा मर्यादित

1.2 वर्णनात्मक अनुवाद अध्ययन : इसमें निम्न तीन बातों को शामिल किया जा सकता है :

(i) उत्पाद आधारित : इसमें पहले से ही अनूदित पाठ अर्थात प्राप्त अनुवाद की चर्चा होती है।

(ii) प्रक्रिया आधारित : अनुवाद कार्य में अनुवाद की प्रक्रिया महत्वपूर्ण होती है। इसमें अनुवाद प्रक्रिया के दौरान होने वाली मानसिक प्रक्रियाओं की बात होती है।

(iii) प्रकार्य आधारित : अनुवाद करने पर लक्ष्य भाषा की संस्कृति में इन अनुवादों का क्या असर पड़ सकता है या अनुवाद इसमें किस तरह की भूमिका निभाता है, जैसी बातों का अध्ययन इसमें किया जाता है।

(ख) प्रायोगिक अनुवाद अध्ययन

जैसे कि नाम से ही पता चलता है इसमें अनुवाद के प्रायोगिक पक्ष से जुड़े पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। प्रायोगिक अनुवाद अध्ययन का संबंध अनुवाद प्रशिक्षण, अनुवाद उपकरण तथा अनुवाद समीक्षा से है।

जेम्स होम्स द्वारा प्रस्तुत अनुवाद अध्ययन के वर्गीकरण (Toury से उद्धृत, पृ. 181) को सुविधा की दृष्टि से निम्न तालिका से समझा जा सकता हैं :

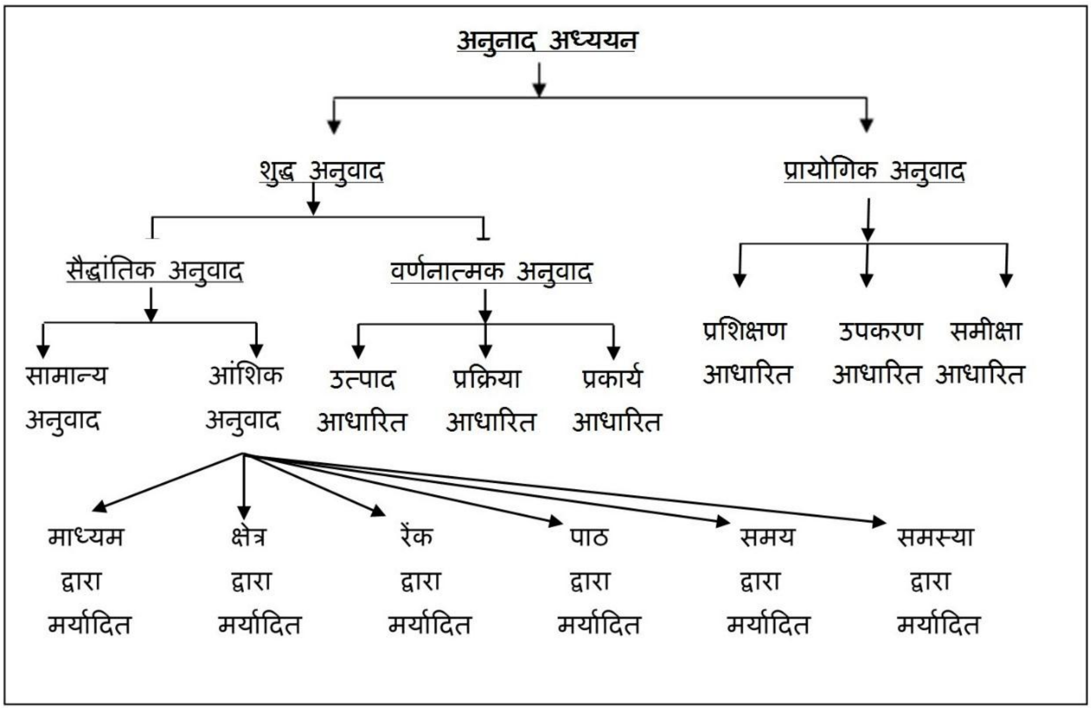

अनुवाद में उत्तर-आधुनिकता को समझने के लिए सबसे पहले उन प्रमुख परिवर्तनों को समझना पड़ेगा जिसने उत्तर-आधुनिक समय में अनुवाद को विशेष रूप से प्रभावित किया है। डॉ. रजना अरगड़े (अनुवाद में उत्तर-आधुनिकता) के अनुसार अनुवाद की उत्तर-आधुनिक समझ निम्नलिखित महत्वपूर्ण बिंदुओं के अध्ययन से प्राप्त की जा सकती है :

- अनुवाद की परम्परागत समझ बनाम अनुवाद की उत्तर-आधुनिक समझ।
- अनुवाद और प्रौद्योगिकी।
- उत्तर-आधुनिक अनुवाद-दृष्टि की भाषा संबंधी समझ।

अनुवाद का उत्तर-आधुनिक स्वरूप भाषा प्रौद्योगिकी, संगणक, बाज़ार, विज्ञापन आदि से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। इतना ही नहीं इसमें परिधि पर स्थित, अलक्षित को लक्षित करने की बात पर भी विशेष बल दिया गया है । शुरू से ही अनुवाद दोयम दर्जे का माना गया है, चाहे 1972 के पहले की बात हो या फिर उसके बाद की। परन्तु वाल्टर बेंजामिन के बाद और उससे भी अधिक जॉक देरिदा के

आविर्भाव के बाद अनुवाद को देखने का लोगों का दृष्टिकोण परिवर्तित हो गया। पहले साहित्य केन्द्र में था अनुवाद हाशिए पर था। वह मूल का पिछलग्गू था। लेकिन उत्तर-आधुनिकता के आने के बाद अनुवाद का स्थान बदल गया।

उत्तर-आधुनिकता ने अर्थ की स्थिरता, निश्चितता को नकारते हुए अर्थ के अनंत द्वार खोल दिए। अनुवाद का मुख्य उद्देश्य है संप्रेषण। मनुष्य के भावों, विचारों तथा भाषा सौंदर्य का संप्रेषण। मनुष्य के भाव एवं विचारों की अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से होती है। भाषा शब्दों से बनती है और शब्दों के अर्थ होते हैं। उत्तर-आधुनिकता में प्रवेश करने के पश्चात् शब्द तथा अर्थ के संदर्भ में समझ बदली है। अर्थ स्थिर नहीं होते। अर्थ संदर्भ के अनुसार तय होते हैं। वे अनिश्चित होते हैं, अनंत होते हैं। स्रोत पाठ के किसी भी शब्द का कोई एक निश्चित अर्थ नहीं होता। अतः यह तय कर पाना बहुत मुश्किल हो जाता है कि कौन-सा अर्थ लिया जाए।

प्रारंभ से ही अनुवाद का संबंध भाषाविज्ञान से जोड़ा गया है। इसे व्याकरण से भी संबंधित माना गया है। किंतु अब अनुवाद का संबंध राजनीति, समाज-शास्त्र, संस्कृति अध्ययन तथा विचारधारा से जुड़ गया है। अनुवाद को परिभाषित करते हुए जब कहा जाता है कि इसमें एक पाठ दूसरे पाठ में, एक भाषा से दूसरी भाषा में स्थानांतरित होती है तो केवल एक भाषा-व्यवस्था को दूसरी भाषा व्यवस्था में ही नहीं ले जाते बल्कि एक समाज को दूसरे समाज में, एक संस्कृति को दूसरी संस्कृति में स्थानांतरित किया जाता है, रूपांतरित किया जाता है। यह प्रक्रिया राजनीति, समाज-शास्त्र, संस्कृति अध्ययन तथा विचारधारा से अनुवाद के संबंध को ही रेखांकित करती है।

अनुवाद करते समय स्रोत भाषा की सामग्री का लक्ष्य भाषा में समतुल्यता के आधार पर रूपांतरण किया जाता है। यह सामग्री क्रमशः स्रोत पाठ और लक्ष्य पाठ कहलाती है। अर्थात् स्रोत भाषा में लिखा हुआ कुछ भी पाठ (text) कहलाता है चाहे वह

एक वाक्य हो अथवा महाकाव्य हो। इसी प्रकार अनूदित सामग्री भी एक पाठ है। अनुवाद अध्ययन में लिखी हुई हर चीज़ पाठ (text) है। यानी जिसका अनुवाद किया जाता है और जो अनूदित होता है वह सब कुछ पाठ है।

पढ़ने की शैली को पाठ कहते है। विखंडन पाठ की एक शैली है। पाठ का विखंडन करने पर अन्तर्पाठ (inter text) मिलता है। हर पाठ में अन्तर्पाठीयता होती है जो पाठक को किसी अन्य पाठ की ओर ले जाती है। जैसे तुलसीदास के 'रामचरितमानस' में वाल्मीकि के रामायण का पाठ छिपा है। गोदान में भारतीय सामंती व्यवस्था, दलित विमर्श तथा स्त्री विमर्श का पाठ छिपा है। इस प्रकार एक रचना को पढ़ते समय दूसरी रचना के पाठ का स्मरण होना अन्तर्पाठीयता है। यह अन्तर्पाठीयता मात्र किसी रचना तक ही सीमित नहीं रहती। जैसे कि पहले ही कहा जा चुका है कि अनुवाद में सिर्फ भाषा की व्याकरणिक व्यवस्था का ही पुनःस्थापन नहीं किया जाता बल्कि इसके साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक पाठ का भी पुनःस्थापन किया जाता है।

उत्तर-आधुनिकता का सीधा संबंध सूचना प्रौद्योगिकी से है। भाषा प्रौद्योगिकी, संगणक, बाज़ार, विज्ञापन आदि सूचना प्रौद्योगिकी के विभिन्न रूप हैं। अर्थात् सूचना प्रौद्योगिकी उत्तर-आधुनिकता का एक लक्षण है। सूचना प्रौद्योगिकी में इंटरनेट की भूमिका महत्वपूर्ण है जिसको आधार बनाकर हायपर पाठ (hyper text) को समझा जा सकता है क्योंकि हायपर टेक्स्ट का संबंध इसी भाषा प्रौद्योगिकी से है।

मानव जिस प्रकार विभिन्न भाषाओं के माध्यम से अपने भाव और विचारों की अभिव्यक्ति करता है ऐसी कोई भाषा संगणक के पास नहीं है अर्थात् हिन्दी, अंग्रेजी, फ्रेंच आदि। संगणक सिर्फ बाइनरी भाषा को समझता है। संगणक उपयोगकर्ता द्वारा प्रविष्ट किसी डाटा को, जैसे कि 'S' या 'स' को, बाइनरी भाषा में समझता है, इसी भाषा में डाटा को लिखता है और बिना अर्थ बदले स्रोत पाठ को अपनी अभिव्यक्ति

पद्धति - भाषा में स्थानांतरित करता है। इस प्रकार संगणक द्वारा प्रदर्शित पाठ की दृश्यात्मकता और उपयोगकर्ता के पाठ की दृश्यात्मकता में अंतर है पर वह है तो वही। कहने का तात्पर्य है कि संगणक मूल पाठ को अपनी अभिव्यक्ति पद्धति (भाषा) में उपयोगकर्ता तक संप्रेषित करता है। इसी को मूलतः हायपर टेक्स्ट कहते है। अनुवाद में भी यही किया जाता है। यही अनुवाद की उत्तर-आधुनिक तकनीकी समझ है।

उत्तर-आधुनिकता के बाद अनुवाद को पुनःसृजन का दर्जा दिया जाने लगा है। इसमें मूल सामग्री के शरीर रूप शब्द, वाक्य आदि के संप्रेषण के स्थान पर उसकी आत्मा रूप कथ्य और सांस्कृतिक संदर्भों पर बल दिया जाता है। यहाँ अनुवादक को घटाने-बढ़ाने की स्वतंत्रता बनी रहती है। परिणामतः इससे साहित्यिक रचनाओं के श्रेष्ठ अनुवाद की संभावनाएँ और भी बढ़ गई है। पुनःसृजन से स्रोत-भाषा की अभिव्यक्ति की छाप नहीं रहती और अनूदित कृति मौलिक रचना-सी लगती है। पाठक मौलिक रचना का आनंद उठाते हुए अनुवाद को पढ़ सकता है। हिन्दी में आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा एडविन आर्नल्ड के 'लाइफ ऑफ एशिया' का 'बुद्ध चरित' नाम से किया गया अनुवाद इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। फिट्जेराल्ड द्वारा उमर खैयाम की रूबाइयों का अंग्रेजी में किया गया अनुवाद 'रूबाइयत ऑफ उमर खैयाम' भी एक श्रेष्ठ उदाहरण माना गया है।

2.5 अनुवाद की प्रकृति और प्रक्रिया

2.5.1 अनुवाद की प्रकृति

अनुवाद की प्रकृति से तात्पर्य है विषय विवेचन में व्यक्ति सापेक्षता या व्यक्ति निरपेक्षता का होना। अनुवाद के विषय में उसकी प्रकृति निश्चित करना कठिन कार्य है। इस संबंध में निम्न विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है :

2.5.1.1 व्यक्तिपरक

अनुवाद के इतिहास का अध्ययन इस बात का समर्थन करता है कि प्रारंभ में अनुवाद ज्ञान का एक ऐसा क्षेत्र था जिसमें वैयक्तिक रुचि की प्रधानता थी। एक भाषा का कोई पाठ किसी व्यक्ति को अच्छा लगा अथवा उसमें अभिव्यक्त विचारों से वह प्रभावित हुआ तो वह व्यक्ति उस पाठ को दूसरी भाषा में स्थानांतरित करने का उपक्रम करता था। अनुवाद को व्यक्तिपरक समझ ने का एक आधार यह भी है कि अनुवाद में अनुवादक की रुचि के अतिरिक्त, उसके स्वभाव, उसकी पृष्ठभूमि, लक्ष्य भाषा का ज्ञान आदि उसे प्रभावित करते हैं। यही कारण है कि एक ही पाठ का अलग-अलग अनुवादकों द्वारा किया गया अनुवाद भिन्न-भिन्न होता है। रवीन्द्रनाथ टागोर की 'गीतांजलि' और उमर खैयाम की रूबाइयाँ ऐसे अनुवाद के उत्तम उदाहरण है जिस पर अनुवादकों का प्रभाव देखा जा सकता है। अनुवाद की इस प्रकृति को व्यक्तिपरक अनुवाद की संज्ञा दी जा सकती है।

2.5.1.2 रचनापरक

रचनापरक अनुवाद से तात्पर्य है - अनुवाद में यथासंभव व्यक्ति निरपेक्षता का होना। समय परिवर्तन के साथ एक ही पाठ की अनेक भाषाओं में अनुवाद की आवश्यकता उपस्थित होने लगी, ऐसी स्थिति में अनुवादक के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह अपनी निजी रुचि के स्थान पर पाठ-रचना को आधार बनाएँ। यहाँ अनुवाद व्यक्तिपरक न रहकर रचनापरक बनने की प्रकृति ग्रहण करता है। प्राचीन धार्मिक साहित्य जैसे बाइबिल, कुरान, गीता आदि के अनुवाद में व्यक्ति की अपनी रुचि का प्रभाव गौण हो जाता है। इसीलिए इन धार्मिक रचनाओं के अलग-अलग भाषा में अनेक अनुवाद होने पर भी उसमें पर्याप्त समानता दृष्टिगत होती है। ज्ञानपरक साहित्य का अनुवाद करने में रचनापरक आधार और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। रचनापरकता के अभाव में अनूदित सामग्री मूल पाठ के एकाधिक रूप धारण कर लेती

है, जिससे मूल कथ्य में विकृति पैदा हो सकती है।

2.5.1.3 कला

कला का संबंध सृजन से है। जब मनुष्य अपने भाव, अनुभूति, विचारों को रंग, रूप, रेखा, शब्द आदि के माध्यम से अभिव्यक्त करता है तब उसे कला कहा जाता है। कला के दो रूप माने गए हैं - सुकुमार कला और प्रयोजन कला। साहित्य का संबंध सुकुमार कला से है। इसमें शब्दों के माध्यम से रचनाकार अपने भाव-विचार आदि को मूर्त रूप प्रदान करता है। अनुवाद इस कलाकृति का, उसमें निहित रस-भाव और सौंदर्य का लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार किया गया पुनः सृजन है। इसमें मूल पाठ की अनुभूतियाँ, भाव-विचार आदि का भाषागत संरचना सहित लक्ष्य भाषा में पुनः निर्माण किया जाता है। साहित्यिक रचनाओं के अनुवाद को पढ़ते समय मौलिक रचना (सृजनशीलता) जैसा अनुभव किए जाने की माँग सदा से ही बनी हुई है, उत्तर-आधुनिक युग में ज्ञानवर्धक साहित्य अर्थात साहित्येतर लेखन में भी इस प्रकार की माँग की जा रही है। अनुवाद साहित्य में उपस्थित अनुवाद के कई सारे बेहतरीन उदाहरण अनुवाद की सृजनशीलता की पुष्टि करते हैं।

वैसे भी कविता की एक पंक्ति के एकाधिक अनुवाद संभव होते हैं और एक ही पाठ के दस अनुवादकों द्वारा किए गए अनुवाद अनुवादक के भिन्न-भिन्न रस-सौंदर्य के स्वाद की छाप के साथ मूल पाठ का अनुभव कराते हैं। यूँ ही नहीं साहित्य के अनुवाद के संदर्भ में कहा जाता है कि एक सृजनशील हृदय ही दूसरे सृजनशील हृदय की कलाकृति का पुनः सृजन कर सकता है। अनुवादक को मूल पाठ में व्यक्त रचनाकार की संवेदनाओं के साथ ऐक्य स्थापित करना पड़ता है। साहित्यानुवाद को इसीलिए कला माना गया है। प्रायः अनूदित रचना को कलाकृति ही माना जाता है, फिर चाहे अनुवाद की प्रक्रिया में भले ही वैज्ञानिकता का स्वीकार किया जाए।

2.5.1.4 विज्ञान

किसी भी विषय के व्यवस्थित एवं विशिष्ट ज्ञान को विज्ञान कहा जाता है। जब किसी विषय का व्यवस्थित वैज्ञानिक निरीक्षण-विश्लेषण किया जाने लगता है तब वह विज्ञान की संज्ञा प्राप्त करने का अधिकारी बन जाता है। आज अनुवाद व्यक्ति-आधारित प्रक्रिया न रहकर व्यवस्थित वैज्ञानिक विवेचन करने योग्य बन गया है। दो भाषाओं के वैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर निश्चित किए गए वैज्ञानिक नियम से ही मशीन अनुवाद संभव हो सका है। यद्यपि अनुवाद का विज्ञान पक्ष वास्तविक अनुवाद प्रक्रिया की पृष्ठभूमि में होता है, अनुवाद करने में नहीं। अनुवाद विज्ञान तो है किन्तु उस रूप में शुद्ध विज्ञान नहीं जिस रूप में गणितशास्त्र, रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान है बल्कि इसे सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत आने वाले मनोविज्ञान, समाजविज्ञान, राजनीतिविज्ञान की ही तरह एक विज्ञान कहा जा सकता है।

2.5.2 अनुवाद की प्रक्रिया

आज अनुवाद का शास्त्र निर्मित हो चुका है और अनुवाद अध्ययन एक स्वतंत्र विद्याशाखा के रूप में विकसित हो चुका है तब अनुवाद की प्रक्रिया का अध्ययन और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। कारण यह है कि किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन की प्रक्रिया जितनी व्यक्ति निरपेक्ष होती है उसका वैज्ञानिक आधार उतना ही अधिक होता है। अनुवाद में एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में ले जाया जाता है। अतः ऊपर-ऊपर से देखने पर अनुवाद की प्रक्रिया में किसी जटिलता का बोध नहीं होता, यह सरल लगती है, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है। अनुवाद में मूल पाठ की प्रत्येक इकाई का अनुवाद किया जाता है। अतः अनुवाद की प्रक्रिया बहुत कठिन और पेचीदा है। अनुवाद की प्रक्रिया साहित्य सृजन की प्रक्रिया का दोहरा रूप है। इस संबंध में डॉ. पूरनचंद टंडन लिखते हैं "साहित्य-सृजन की प्रक्रिया में चार चरण होते हैं - अवलोकन, अनुभव, चिंतन-मनन तथा सर्जनात्मक अभिव्यक्ति। अनुवाद में इन चारों

चरणों की दोहरी प्रक्रिया लागू होती है और पाँचवा चरण अनुवाद स्वरूप का होता है।" (टंडन पृ. 15) अनुवाद की प्रक्रिया के संबंध में नाइडा, न्यूमार्क, बाथगेट, भोलानाथ तिवारी आदि ने अपने विचार प्रस्तुत किए हैं।

यूजेन नाइडा अनुवाद में पर्याय को निर्धारित करने वाली प्रक्रिया के दो प्रारूप का उल्लेख करता है - प्रत्यक्ष और परोक्ष। प्रत्यक्ष प्रक्रिया के प्रारूप का संबंध पाठ की सतही संरचना से है। इसमें मूल पाठ की सतही संरचना के स्तर पर प्राप्त भाषिक इकाइयों के अनुवाद पर्याय लक्ष्य भाषा में निश्चित होते हैं और एक क्रमबद्ध प्रक्रिया के साथ मूल पाठ के प्रत्येक अंश का अनुवाद किया जाता है। परोक्ष प्रक्रिया के प्रारूप का संबंध पाठ की गहन संरचना से है। यहाँ मूल पाठ की गहन संरचना में जाकर लक्ष्य भाषा में उसका अनुवाद पर्याय प्रस्तुत किया जाता है। नाइडा दूसरी - परोक्ष प्रक्रिया प्रारूप का पक्षधर है। बाइबिल के अनुवाद से जुड़े नाइडा के विचार में अनुवाद की प्रक्रिया के तीन सोपान है :

(1) पाठ-विश्लेषण : स्रोत भाषा के पाठ की व्याकरणिक संरचना, शब्दों का अर्थगत विश्लेषण करके स्रोत भाषा के मूल संदेश को ग्रहण करना।

(2) संक्रमण : यह स्रोत भाषा से ग्रहीत पाठ के मूल संदेश को उसकी समग्र विशेषताओं सहित लक्ष्य भाषा में संक्रमित करने की मानसिक प्रक्रिया है। इस चरण में मूल पाठ के लक्ष्य भाषा में पर्याय निर्धारित किए जाते हैं।

(3) पुनर्गठन : यहाँ मूल भाषा के संदेश का लक्ष्य भाषा की संरचना और प्रकृति के अनुसार पुनर्गठन किया जाता है।

पीटर न्यूमार्क अनुवाद में मूल भाषा पाठ को लक्ष्य भाषा पाठ के साथ जोड़ता है। इससे दोनों भाषाओं के पाठ के अनुवाद संबंध तुलना और व्यतिरेक के संदर्भ में देखा जा सकता हैं। न्यूमार्क अनुवाद की प्रक्रिया के निम्न तीन चरण मानता है:

(1) बोधन (तथा व्याख्या) : मूल पाठ का बोध और उसकी व्याख्या की जाती है।

(2) अभिव्यक्ति (तथा पुनः सर्जन) : स्रोत पाठ को लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्त करते हुए पुनः सृजित करना।

(3) शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद : इसमें दोनों भाषाओं के बीच का संबंध और अंतर स्पष्ट होता है।

बाथगेट (1980) का अनुवाद प्रक्रिया का प्रारूप अपने पूर्ववर्ती नाइडा और न्यूमार्क से अधिक व्यापक है। इसे वह संक्रियात्मक प्रारूप कहता है। यह प्रारूप अनुवाद कार्य की व्यावहारिक प्रकृति से अधिक मेल खाता है। बाथगेट के अनुसार अनुवाद प्रक्रिया के सात सोपान है :

(1) समन्वयन : मूल पाठ की ऊपरी समझ बनाकर अनुवाद की मानसिकता बनाना।

(2) विश्लेषण : पाठ का भाषिक संरचनागत और अर्थगत विश्लेषण करना।

(3) बोधन : मूल पाठ का अर्थ ग्रहण करना।

(4) पारिभाषिक अभिव्यक्ति : मूल पाठ के वह विशेष अंश जो अर्थ निर्धारण में महत्वपूर्ण है तथा अनुवाद में उनके पर्याय भी विशेष होते हैं उसकी अभिव्यक्ति।

(5) पुनर्गठन : स्रोत भाषा के पाठ का लक्ष्य भाषा की पाठ-प्रकृति के अनुसार पुनर्गठन करना।

(6) पुनरीक्षण : अनूदित पाठ की भाषा एवं व्याकरण, प्रवाहिता तथा मुद्रण की दृष्टि से जांच-पड़ताल करना। यह कार्य प्रायः अनुवादक से भिन्न व्यक्ति करता है।

(7) पर्यालोचन : यदि अनूदित सामग्री की प्रामाणिकता की आवश्यकता हो तो अनुवादक और विषय विशेषज्ञ साथ में मिलकर अनूदित सामग्री की प्रामाणिकता की पुष्टि करते हैं।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में भोलानाथ तिवारी ने अनुवाद सिद्धांत पर महत्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होंने अनुवाद की प्रक्रिया के छह सोपान माने हैं। (1) मूलपाठ बोधन (2) विश्लेषण (3) भाषांतरण (4) पुनरीक्षण (5) समायोजन और (6) तुलना। इन सभी सोपान का परिचय पूर्ववत प्राप्त हो चुका है।

अनुवाद की प्रक्रिया के संबंध में विद्वानों द्वारा प्रदत्त उपर्युक्त सोपानों को देखने के बाद सुविधा की दृष्टि से अनुवाद प्रक्रिया के प्रमुख सोपान निम्नानुसार हो सकते हैं :

2.5.2.1 पाठ-पठन

पाठ-पठन अनुवाद की प्रक्रिया का प्रथम सोपान है। इसमें मूल पाठ का विविध संदर्भों को ध्यान में रखते हुए पठन किया जाता है। मूल कृति को जानने के लिए अनुवादक लेखक की विचारधारा, उसका व्यक्तित्व, उसकी मानसिकता, उसके युग का परिवेश, परंपराएँ एवं प्रवृत्तियाँ से आवश्यक परिचय प्राप्त करता है। कृति के आशय तक पहुँचने के लिए उसकी भाषिक संरचना और अर्थगत संदर्भों को ग्रहण किया जाता है। सृजनात्मक साहित्य में लेखक अभिप्रेत भाव-भूमि तक पहुँचने के लिए अनुवादक को कल्पना का सहारा भी लेना पड़ता है। वह उस भाव-भूमि को अनुभव करता है, जीता है और तब जाकर कृति हृदयंगम होती है।

2.5.2.2 पाठ-विश्लेषण

भाषा का संबंध समुदाय विशेष से है। इसीलिए प्रत्येक भाषा में उस विशेष समाज एवं संस्कृति का प्रभाव परिलक्षित होता है। अनुवाद में स्रोत भाषा के पाठ को लक्ष्य भाषा में ले जाया जाता है। लेकिन भाषा की संरचनागत विशिष्टता के कारण स्रोत भाषा के पाठ को ज्यों का त्यों लक्ष्य भाषा में नहीं लिखा जा सकता। अतः अनुवादक स्रोत भाषा का भाषिक संरचना, व्याकरण आदि की दृष्टि से जो विश्लेषण करता है वह अनुवाद कार्य में पाठ निर्धारण की कठिनाइयों के दौरान सहायक होता

है। अनुवाद कार्य में अनेकार्थी, विभिन्नार्थी, पर्यायवाची आदि शब्द संदर्भगत विशिष्ट अर्थ के द्योतक बन जाते हैं साथ ही सांस्कृतिक आदि विशिष्ट संदर्भों का विश्लेषण अवश्य ही अनुवाद के लिए उपकारक सिद्ध होता है। इसी के आधार पर अनुवादक लक्ष्य भाषा में समतुल्य प्राप्त कर सकता है और लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार पाठ का अनुवाद कर सकता है।

2.5.2.3 पाठ का भाषांतरण

अनुवाद प्रक्रिया के तीसरे सोपान में स्रोत भाषा के पाठ के मूल आशय को यथासंभव उसकी समग्र विशेषताओं के साथ लक्ष्य भाषा में अंतरित किया जाता है। यहाँ भाषांतरण करते हुए स्रोत भाषा के पाठ के लिए लक्ष्य भाषा में समतुल्य पर्याय निर्धारित किए जाते हैं। आज जब अनुवाद को पुनः सृजन कहा जाता है और अनूदित रचना से मूल रचना जैसी मौलिकता की माँग की जाती है, तब अनुवाद प्रक्रिया के इस चरण में स्रोत भाषा की विशिष्टताओं को लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार अनूदित करने में प्रवाहमयता, सहजता, स्वाभाविकता आदि की समस्याएँ उपस्थित होती हैं। लक्ष्य भाषा के मुहावरे के अनुसार अनुवाद करते हुए अनुवाद में भाषिक इकाइयों के स्तर पर कुछ छूट जाता है, साथ ही अर्थ को संप्रेषित करने में अनुवाद में कुछ और जुड़ भी जाता है। मूल पाठ और अनूदित पाठ के बीच यथासंभव संतुलन बनाते हुए अनुवाद करने में ही अनुवादक की सफलता मानी जाता है।

2.5.2.4 स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा का समायोजन

अनुवाद प्रक्रिया का यह अंतिम सोपान है जहाँ अनुवाद कार्य पूर्ण होने के बाद अनुवादक एक पाठक की भाँति अनूदित पाठ का विश्लेषण करता है। यहाँ लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार मूल पाठ का संप्रेषण हुआ है या नहीं इस बात की जाँच-पड़ताल भाषिक संरचना, व्याकरण, शैली आदि स्तरों पर की जाती है। समायोजन के सोपान में अनूदित पाठ की संप्रेषणीयता को ध्यान में रखते हुए अंतिम स्वरूप दिया

जाता है।

अनुवाद की प्रक्रिया के उपर्युक्त प्रमुख चारों सोपानों का अपना महत्व है जिससे गुजरते हुए अनुवादक मूल कृति को संप्रेषणीय बना सकता है। यह भी संभव है कि अनुभवी और कुशाग्र बुद्धि वाला कोई अनुवादक अनुवाद कार्य में अनुवाद प्रक्रिया के इन सोपानों का अनुसरण न करने पर भी संप्रेषणीय अनुवाद उपलब्ध करवा सकता है।

2.6 अनुवाद के प्रकार

अनुवाद का गहन अध्ययन करने के लिए अनुवाद के विविध प्रकारों का अध्ययन करना अनिवार्य है। अनुवाद के प्रकारों की चर्चा से अनुवाद प्रजातियों और अनूदित पात्रों दोनों को समझा जा सकता है। चूंकि एक विशिष्ट प्रणाली से अनुवाद करने पर एक विशिष्ट प्रकार का पाठ निष्पन्न होता है अतः अनुवाद के प्रयोजन से अनुवाद के प्रकारों की जानकारी प्राप्त करना आवश्यक बन जाता है। अनुवाद के विभिन्न पक्षों को ध्यान में रखते हुए कई विद्वानों ने अनुवाद के प्रकारों का वर्गीकरण किया है, जो निम्नानुसार है :

रोमन जैकब्सन ने अनुवाद के तीन प्रकार की चर्चा की है (Jakobson पृ. 261)

(क) अंतः भाषिक अनुवाद (Intralingual Translation or Rewarding): इसमें एक भाषा के वाचिक चिन्हों को उसी भाषा में प्राप्त अन्य चिन्हों से स्थानांतरित किया जाता है।

(ख) अंतर भाषिक अनुवाद (Interlingual Translation or Translation Proper): इसमें एक भाषा के वाचिक चिन्हों को दूसरी भाषा में प्राप्त चिन्हों से स्थानांतरित किया जाता है।

(ग) अंतर प्रतीकात्मक अनुवाद (Intersemiotic Translation or Transmuta-tion): इसमें वाचिक चिन्हों (वर्बल) को अवाचिक (नोन वर्बल) चिन्हों से

व्याख्यायित (इंटरपुट) किया जाता है।

जोन ड्राइडन ने अनुवाद के मुख्य तीन भेद किए है (Susan Bassnett and Mc Guire पृ. 60) :

(क) मैटाफ्रेज़ : शब्द के लिए शब्द और वाक्य के लिए वाक्य अनुवाद

(ख) पैराफ्रेज़ : भाव के लिए भाव का अनुसरण

(ग) इमीटेशन : कृति की आत्मा को बनाए रखने के लिए मूल के शब्द और अर्थ को छोड़ने की स्वतंत्रता।

ड्राइडन ने पैराफ्रेज़ को अनुवाद का श्रेष्ठ तरीका माना है।

डॉ. सुरेश कुमार ने 'अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा' (पृ. 68-69) में अनुवाद के निम्नलिखित प्रकार बताए हैं :

(क) भाषा बाह्य अनुवाद प्रकार :

(1) पाठ के आकार की दृष्टि से : पूर्ण अनुवाद और आंशिक अनुवाद।

(2) अनुवाद की अभिव्यक्ति की दृष्टि से : मानव अनुवाद और मशीन अनुवाद।

(ख) भाषा केन्द्रित अनुवाद प्रकार :

(1) भाषा संरचना के आधार पर :

स्थानिमिक, लेखिनीय, व्याकरणिक, शब्दकोशीय अनुवाद।

(2) भाषा-शैली के आधार पर :

साहित्यिक, शास्त्रीय, तकनीकी, जन-संपर्कीय अनुवाद।

(3) भाषा माध्यम के आधार पर :

मौखिक और लिखित अनुवाद।

(ग) भाषा-प्रतीक आधारित अनुवाद प्रकार :

समभाषिक, अन्य भाषिक, अन्तरसंकेतपरक अनुवाद।

(घ) भाषा-पाठ प्रकार आधारित अनुवाद प्रकार :

गद्य अनुवाद और पद्य अनुवाद।

(ङ) गौण अनुवाद प्रकार :

परोक्ष अनुवाद, पुनरानुवाद, सूचनानुवाद, सामान्य गद्यानुवाद, शैक्षिक अनुवाद, रूप प्रधान अनुवाद, सारानुवाद

इन वर्गीकरणों को देखने के बाद सुविधा की दृष्टि से अनुवाद के प्रकारों का निम्नानुसार अध्ययन किया जा सकता है :

2.6.1 अनुवाद के भाषापरक प्रकार

2.6.2 अनुवाद के पाठ-प्रकृति परक प्रकार

2.6.3 अनुवाद के अन्य प्रकार

2.6.1 अनुवाद के भाषा-परक प्रकार

अनुवाद की परिभाषा देते हुए प्रारंभ में ही स्पष्ट किया गया है कि अनुवाद एक भाषिक प्रक्रिया है अथवा भाषिक प्रक्रिया का परिणाम है, जिसमें एक भाषा में कही गई बात को दूसरी भाषा में बदला जाता है। यहाँ अनुवाद के भाषा-परक प्रकारों का अध्ययन किया जा रहा है :

2.6.1.1 शब्दानुवाद

शब्दानुवाद में मूल पाठ के प्रत्येक शब्दों के स्थान पर लक्ष्य भाषा के पर्यायों को रखा जाता है। अंग्रेजी में इसे लिटरल ट्रांसलेशन, वर्बल ट्रांसलेशन, वर्ड-फोर-वंड ट्रांसलेशन आदि संज्ञा दी गई है। ज्ञानपरक विषय जैसे ज्योतिष, विज्ञान, इतिहास, विधि, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, आदि के लिए शब्दानुवाद को उपयोग में लाया जाता है। सूचनापरक, वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयों के लिए शब्दानुवाद अधिक कारगर साबित हुआ है। विधि-साहित्य में प्रत्येक शब्द अपना महत्व और विधिक सार्थकता लिए हुए रहता है। अतः इनमें शब्दानुवाद को ही प्रामाणिक अनुवाद माना जाता है।

शब्दानुवाद की कुछ सीमाएँ भी है। मूल पाठ की सभी शब्दाभिव्यक्तियों को प्रायः उसी क्रम में रखने से अथवा मूल पाठ के प्रत्येक शब्द पर अनुवाद में पूरा ध्यान रखने से अनूदित पाठ अबोधगम्य हो जाता है।

स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के शब्दार्थ, विशिष्ट प्रयोग, मुहावरे तथा पाठ्य रचना आदि की दृष्टि से जितनी अधिक असमानताएँ होगी अनुवाद करने में उतनी ही अधिक कठिनाई होगी। ज्ञानपरक विषयों में आने वाली पारिभाषिक शब्दावली की समस्या को पारिभाषिक शब्दकोश के द्वारा सुलजाया जा सकता है लेकिन सूक्ष्म भाव प्रधान रचनाओं का शब्दानुवाद करना संभव नहीं है।

2.6.1.2 भावानुवाद

भावानुवाद में मूल पाठ के कथ्य और शैली दोनों को लक्ष्य भाषा में संयोजित किया जाता है। जब पाठ में अभिधा से अर्थ ग्रहण करना संभव नहीं होता, और लक्षणा तथा व्यंजना से या फिर सांस्कृतिक आदि संदर्भों से अर्थ ग्रहण करना पड़ता है तब भावानुवाद का सहारा लिया जाता है। उदाहरण के रूप में 'मन' शब्द का अंग्रेजी में कोई पर्याय न होने से उसका शब्दानुवाद नहीं किया जा सकता। अतः संदर्भ के अनुसार लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ से अर्थ ग्रहण करना पड़ेगा। यहाँ इस बात का संदर्भ मिलता है कि भारतीय परंपरा में काव्य शास्त्र में ध्वनि का प्रभाव इसमें पढ़ा जा सकता है। काव्यार्थ को इसी तरह खोजे जाने की परंपरा है। इतना ही नहीं मूल रचना के संगीत - छंद, अलंकार के चमत्कार आदि को दूसरी भाषा में अनूदित करना कठिन होता है। इस प्रकार के अनुवाद कर तो लिए जाते हैं किंतु इसमें मूल पाठ के साथ जुड़ा माधुर्य प्रायः समाप्त हो जाता है।

बिहारी के एक दोहे का अंग्रेजी अनुवाद करते समय अनुवादक ने न केवल दोहा छंद को अंग्रेजी में रखा, वरन अंत्यानुप्रास में सम और विषम चरणों का भी उसमें निर्वाह किया है। यथा

बिहारी : अति अगाध अति अथरौ, नदी, कूप, सर, बाय।

सो ताको सागर जहाँ, जाकी प्यास बुझाय।।

अनुवाद : Deep or shallow, let it be,

River, streamlet, lake or pool;

That to him is still a sea,

Who there his parching thirst can cool.

निःसंदेह यह अनुवाद बहुत अच्छा और सफल है, लेकिन स्वरों की संख्या और कठोर वर्ण के अभाव पर निर्भर भाषा की जो मधुरता मूल में है वह अनुवाद में नहीं है। यहाँ मूल में 'ट' वर्ग के कठोर वर्ण का उपयोग नहीं किया गया है, जबकि अनुवाद में 'ट' (T) का प्रयोग आठ बार किया गया है। स्वाभाविक रूप से अनुवाद में मूल जितनी भाषिक मधुरता नहीं आ पाई है। (हरदयाल पृ. 97-98)

2.6.1.3 छायानुवाद

मूल रचना की छाया या प्रभाव को ग्रहण करके जब अनुवाद किया जाता है तब उसे छायानुवाद कहा जाता है। इसे 'मूलमुक्त' अनुवाद भी कहा जाता है। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक मूल कृति के पात्र, स्थान, परिवेश आदि को मूल कृति की संस्कृति से लक्ष्य भाषा की संस्कृति के अनुसार बदल देता है। जैसे Jackson को जयकिशन में। छायानुवाद का पाठक मूल कृति के सांस्कृतिक परिवेश से दूर रहता है, वहीं कृति के अपरिचित सांस्कृतिक और सामाजिक वातावरण से उबता भी नहीं है। लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार जब भाषा एवं संस्कृति अनूदित कृति में अवतरित की जाती है तब पाठक अनूदित कृति में प्रवाहमयता का अनुभव भी करता है। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक का एक उद्देश्य मूल का प्रभाव मात्र ग्रहण करके कोई नई कृति की रचना करना भी होता है।

2.6.1.4 व्याख्यानुवाद

इसमें मूल सामग्री को व्याख्यायित करते हुए अनुवाद किया जाता है। इस

अनुवाद में अनुवादक मूल पाठ को समझाने के लिए अपने दृष्टिकोण और उदाहरण आदि का उपयोग करते हुए व्याख्यात्मक टिप्पणियाँ भी देता हैं। इससे व्याख्या अनुवाद मूल पाठ की अपेक्षा अधिक विस्तृत हो जाता है। संस्कृत के ज्ञानवर्धक और गूढ़ साहित्य का अनुवाद इस रूप में किया गया है। व्याख्या अनुवाद तभी संभव हो सकता है जब अनुवादक में मूल पाठ के कथ्य-संकेतों और भाषा कौशलों को समझने का गुण मौजूद होता है।

2.6.1.5 सारानुवाद

स्रोत भाषा में व्यक्त मूल के मुख्य कथ्य का संक्षिप्तता के साथ लक्ष्य भाषा में संप्रेषण करना सारानुवाद कहलाता है। सारानुवाद मूल पाठ को संक्षिप्त, अति संक्षिप्त रूप में लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करता है। यह संक्षिप्त होने के साथ सरल, स्पष्ट तथा लक्ष्य भाषा के स्वाभाविक प्रवाह के कारण कार्यालयी-व्यवहारिक कार्यों में व्यापक रूप से उपयोग में लाया जाता है। दुभाषिया द्वारा लंबे भाषणों का अनुवाद प्रायः इसी प्रकार का होता है।

2.6.1.6 रूपांतरण

रूपांतरण का शाब्दिक अर्थ है - रूप को बदल देना। इसमें स्रोत भाषा की सामग्री को लक्ष्य भाषा के परिवेश में इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि वह बिल्कुल स्थानीय प्रतीत होती है। रूपांतरण में मूल सामग्री संक्षिप्त या विस्तृत, सरल या कठिन हो कर आती है।

रूपांतरण प्रायः नाटकों के लिए किए जाते हैं, जिसमें पात्रों के नाम, स्थान के नाम, देशकाल-परिवेश आदि लक्ष्य भाषा के अनुरूप परिवर्तित कर दिये जाते हैं। भारतेन्दु द्वारा किया गया शेक्सपियर के नाटक 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का अनुवाद 'दुर्लभ बंधु' अर्थात 'वंशपुर का महाजन' इसका उत्तम उदाहरण है, जिसमें पात्रों और स्थानों के नाम का पूरी तरह भारतीयकरण कर दिया गया है।

रूपांतरण का तात्पर्य केवल नाटक के सांस्कृतिक-सामाजिक रूपांतरण से ही नहीं है वरन् कहानी आदि किसी एक विधा से नाटक आदि दूसरी विधा में किए गए अनुवाद को भी रूपांतरण कहा जाता है। किसी कृति का दूसरे माध्यम में अनुवाद करना भी रूपांतरण कहलाता है। हिन्दी की साहित्यिक दुनिया को आकाशवाणी द्वारा प्रायः रेडियो रूपांतरण करके प्रस्तुत किया जाता रहा है। लुई कैरल के 'एलिस इन वंडरलैंड' कृति का शमशेर बहादुर सिंह के द्वारा किया हुआ 'आश्चर्य लोक में एलिस' रेडियो रूपांतरण है। तमस उपन्यास का दूरदर्शन के लिए की गयी प्रस्तुति भी रूपांतरण कहलाएगी। अब इसे 'माध्यम अनुवाद' की संज्ञा दी जाती है।

2.6.2 अनुवाद के पाठ-प्रकृति परक प्रकार

2.6.2.1 सृजनात्मक साहित्य-अनुवाद

सृजनात्मक साहित्य के अंतर्गत काव्य, कथा-साहित्य, नाटक, निबंध, आलोचना, आत्मकथा, जीवनी, डायरी, संस्मरण, रेखाचित्र आदि का समावेश होता है। इन सभी विधाओं के अनुवाद को सृजनात्मक साहित्य-अनुवाद के अंतर्गत देखा जाता है। सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद में भाषा की अपेक्षा भाव की प्रधानता होती है। इसी कारण इसका अनुवाद मुखतः भावानुवाद में किया जाता है। रचना में भाव का पुनः उत्पादन करने के लिए अनुवादक को मूल पाठ में कुछ घटाने-बढ़ाने की स्वतंत्रता बनी रहती है। सृजनात्मक साहित्य मूलतः रसात्मक साहित्य है जिसका अनुवाद करते समय अनुवादक को इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए कि अनूदित पाठ मूल पाठ का आस्वादन करा सके। इस आधार पर सृजनात्मक साहित्य के कई भेद हो सकते हैं।

काव्यानुवाद से तात्पर्य है - किसी काव्य-रचना का अनुवाद। यद्यपि प्रारंभ से ही यह प्रश्न विवादों के घेरे में रहा है कि 'काव्य का अनुवाद हो सकता है या नहीं' तथापि विश्व के अनेक काव्यों का श्रेष्ठ अनुवाद हुआ है। काव्यानुवाद पूर्णतः पुनः

सृजन की प्रकिया है। यह तभी संभव हो सकती है जब अनुवादक मूल रचना की आत्मा में प्रवेश कर सके और ऐसा तभी संभव है जब अनुवादक में स्वयं कवि-हृदय का गुण हो। किंतु कुछ अनुवाद चिंतक काव्यानुवाद का गद्य में अनुवाद करने के भी पक्षधर हैं ऐसे स्थानों पर भी शब्दानुवाद की अपेक्षा भावानुवाद को ही प्राधान्य दिया जाना चाहिए। काव्यानुवाद के संबंध में यह भी विवाद है कि अनूदित रचना का स्वरूप क्या होना चाहिए? उसमें मूल छंद का अनुसरण किया जाए या मुक्त छंद का। इस संबंध में अनुवादक से उम्मीद की जाती है कि वह मूल रचना की सूक्ष्म से सूक्ष्म लय और संगीत को यथासंभव अनूदित कृति में लाने का प्रयास करें।

कथा साहित्य - उपन्यास तथा कहानी, का अनुवाद करते समय अनुवादक को कथा साहित्य के तत्वों - कथ्य, शिल्प, संवाद आदि के साथ-साथ रचनागत परिवेश को भी अनूदित पाठ में स्थानांतरित करना पड़ता है। कथ्य में व्यक्त सामाजिक-सांस्कृतिक तत्वों का लक्ष्य भाषा में संप्रेषण एक कठिन कार्य है। इस संबंध में प्रभाकर माचवे के विचार उल्लेखनीय है "अनुवादक अथवा रूपांतरकार प्रायः मूल रचना में वर्णित स्थितियों का वर्णन कर देते हैं, यहाँ तक कि अनुवाद करते समय मूल कृति में आए नामों और रीति-रिवाजों के वर्णनों में भी परिवर्तन कर देते हैं। अनुवाद संबंधी ये पद्धतियाँ अनुवाद की प्रमुख समस्या का समाधान तो करती नहीं, बल्कि समस्या से ही पलायन कराती है।" (माचवे)

इसी प्रकार नाटक, निबंध, आत्मकथा, आलोचना, संस्मरण आदि के आधार पर सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद का अध्ययन किया जा सकता है।

2.6.2.2 विज्ञान अनुवाद

विज्ञान के क्षेत्र में विश्व स्तर पर नित-नवीन संशोधन होते रहते हैं। इन संशोधनों का विस्तार अनुवाद के माध्यम से ही संभव हो सकता है। संसार के सभी राष्ट्र, विशेषकर तीसरी दुनिया के देशों के लिए वैज्ञानिक अनुवाद की महत्ता निःसंदेह

है। वैज्ञानिक सामग्री ज्ञानात्मक होती है। इसमें विषय मुख्य और भाषा-शैली गौण रूप में रहती है। इसलिए विज्ञान के अनुवादक को विषय का अच्छा ज्ञान हो यह आवश्यक है साथ ही भाषा घुमाव-फिराव से रहित, सरल और स्पष्टता जैसे गुणों वाली होनी चाहिए, जिससे मूल की सामग्री अनूदित होने पर क्षतिग्रस्त न हो जाए। वैज्ञानिक शब्दों के अनुवाद के लिए पारिभाषिक शब्दावली का उपयोग आवश्यक बन जाता है। जटिल वैज्ञानिक शब्दों की स्पष्टता के लिए टिप्पणियाँ और व्याख्याएँ भी देने की आवश्यकता पड़ती है।

2.6.2.3 वाणिज्य अनुवाद

वाणिज्य अनुवाद से तात्पर्य है - वाणिज्यिक सामग्री का अनुवाद। उद्योग-व्यापार, बैंक, फिल्म, पर्यटन आदि क्षेत्रों के वाणिज्यिक व्यवहार में आने वाले नियम, कानून, सूचना का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद करने की आवश्यकता होती है। वाणिज्य से संबंधित यह क्रिया-प्रक्रिया तकनीकी प्रकृति की होने के कारण अनुवाद में ऐसे कौशल की अपेक्षा की जाती है। उदाहरण के तौर पर विज्ञापन की भाषा-शैली और प्रस्तुति माध्यम पर आधारित होती है। बैंकों की उपभोक्ता संबंधित सभी सामग्री का द्विभाषाकरण करना अनिवार्य है, अतः यहाँ अनुवाद की भाषा सरल और स्पष्ट होती है। इसमें पारिभाषिक शब्दों का उचित मात्रा में प्रयोग भी रहता है।

2.6.2.4 विधि अनुवाद

विधि अर्थात कानून या न्याय संबंधी सामग्री का अनुवाद एक दुष्कर कार्य माना जाता है। हालाँकि वर्तमान में विधि से संबंधित पारिभाषिक शब्दावली की उपलब्धता ने विधि अनुवाद कार्य संबंधी समस्याओं का कुछ हल तो प्रस्तुत किया है लेकिन विधि अनुवाद में स्पष्टता और शुद्धता का निर्वाह अनुवादक के लिए एक जिम्मेदारी पूर्ण कार्य है। विधि में प्रत्येक शब्द का अपना महत्व और निश्चित अर्थ होता है। लक्ष्य भाषा में इसे स्थानांतरित करते समय छोटी-सी गलती भी बहुत बड़ी समस्या

बन सकती है। इसलिए विधि अनुवादक को भारतीय विधि और संविधान का अच्छा ज्ञान हो, यह अनिवार्य है।

भारत में विधि व्यवस्था प्राचीन काल से ग्राम पंचों द्वारा धर्मग्रंथों के आधार पर निश्चित की गई थी। मुग़ल शासन में विधि संबंधित सारा काम फारसी में किया जाता था। अंग्रेजों के आगमन के पश्चात् न्याय व्यवस्था के लिए न्यायालय की रचना की गई, जिसकी कार्यवाही अंग्रेजी में होने लगी। फिर भी न्यायालय आदि में फारसी शब्दों की अधिकता बनी रही और आज भी इन शब्दों का प्रयोग हो रहा है। सन् 1767 में ब्रिटिश पार्लामेंट ने भारत के विधि-मामलों का अनुवाद हिन्दुस्तानी में प्रस्तुत करने का निर्णय किया। स्वाधीनता के पश्चात् विधि की पारिभाषिक शब्दावली के अभाव में संविधान की धारा 345 में यह प्रावधान किया गया कि राज्य का विधान मंडल विधि द्वारा उस राज्य में प्रयुक्त किसी भाषा को राज्य के शासकीय प्रयोजन के लिए उपयोग में ला सकता है, लेकिन जब तक राज्य द्वारा यह प्रबंध नहीं किया जाता तब तक राज्य के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा। (भारत-सरकार पृ. 253)

इस प्रकार भारतीय विधि-व्यवस्था में हिन्दी की पारिभाषिक शब्दावली की अनिवार्यता उपस्थित हुई। इसके फल स्वरूप राजभाषा आयोग (1961) ने सन् 1965 और 1970 में विधि शब्दावली प्रकाशित की। भारत के संविधान में 22 भाषाओं को मान्यता दी गई है। अतः इनके मध्य विधि अनुवाद की माँग बनी रहती है।

2.6.2.5 तकनीकी अनुवाद

विज्ञान का किसी भी क्षेत्र में उपयोग तकनीक है। विज्ञान के क्षेत्र में आये दिन हो रहे नवीन आविष्कारों ने नूतन तकनीकी को गति प्रदान की है। तकनीकी विकास का यह लाभ विश्व स्तर पर अनुवाद के माध्यम से ही उठाया जा सकता है।

तकनीकी अनुवाद में भाव और शैलीगत समस्याएँ न होने के कारण इसे सरल

समझा जाता रहा है किंतु यह सच नहीं है। पूर्णतः तथ्याधारित सूचनापरक साहित्य का प्रामाणिक और सही अनुवाद कठिन कार्य है। पारिभाषिक शब्दावली की समस्या प्रमुख रूप से उभरकर आती है, इस दिशा में काफी कार्य हुआ है और हो रहा है। अलग-अलग विषय को लेकर पारिभाषिक शब्द कोश बनाये जा रहे हैं, फिर भी इसमें और काफी कुछ कार्य करने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

2.6.2.6 मीडिया अनुवाद

वर्तमान समय में मानव जीवन को संचालित करने में मीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण एवं असंदिग्ध है। प्रिंट मीडिया देश-विदेश की महत्वपूर्ण खबरों को छोटे-से-छोटे आदमी तक पहुँचाता है। वहीं इलैक्ट्रोनिक मीडिया- रेडियो, टेलीविजन, इंटरनेट संसार में पल-पल घटित खबरों को क्षण भर में चारों और प्रसारित कर देता है। सूचना को इतनी तेजी से प्रसारित करने की प्रवृत्ति के कारण मीडिया अनुवाद अन्य अनुवाद प्रकारों से अलग हो जाता है। इसमें अनुवादक को कोश या विषय विशेषज्ञ से मदद लेने का अवकाश नहीं रहता और न ही पुनः निरीक्षण के लिए समय रहता है। ऐसी स्थिति में अनुवाद करते समय उच्चारण, वर्तनी, शीर्षक, मुख्य सामग्री आदि सभी पहलुओं पर अधिक ध्यान रखना आवश्यक बन जाता है। कई बार असावधानी के कारण और अनूदित सामग्री पर स्रोत भाषा के अत्यधिक प्रभाव के कारण हास्यास्पद स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है।

2.6.3 अनुवाद के अन्य प्रकार

2.6.3.1 मशीन अनुवाद

मशीन अनुवाद का संबंध संगणकीय भाषाविज्ञान से है। इसमें कम्प्यूटर सोफ्टवेर की सहायता से अनुवाद किया जाता है। मशीन अनुवाद एक भाषा के शब्दों का अन्य भाषा में स्थानापन्न के सिद्धांत पर काम करता है। चतुर्थ पीढ़ी के कम्प्यूटर से भाषा संरचना और अभिव्यक्ति संबंधी समस्याओं को सुलझाने का प्रयास हो रहा

है। तकनीकी दृष्टि से समृद्ध राष्ट्र कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इन्टेलिजन्स) के अंतर्गत विकसित संकल्पनात्मक निर्भरता को विधि से वाक्य परक, अर्थ परक, और संदर्भ परक संदिग्धता के अलावा मुहावरेदार अभिव्यक्तियों की समस्या को सुलझाने के प्रयास कर रहे हैं। फिर भी इसका उपयोग सीमित है। मशीन अनुवाद मानव अनुवाद जैसा नहीं हो सकता क्योंकि यह भाषा में अभिव्यक्त भाव के मर्म को नहीं समझ सकता।

भारत एक बहु भाषा-भाषी राष्ट्र है जहाँ राजभाषा के रूप में हिन्दी और अंग्रेजी भाषा तथा राज्यों की अपनी-अपनी अलग राजभाषाएँ है। विधि के दिशा-निर्देश अनुसार अंग्रेजी में उपलब्ध सरकारी कागज़ात हिन्दी में भी उपलब्ध करवाना अनिवार्य है। अतः अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता बनी रहती है। इसमें महत्वपूर्ण कार्य सी-डैक संस्था द्वारा किया जा रहा है। सी-डैक द्वारा 'व्याकर्ता' और 'मंत्रा' जैसे सोफ्टवेर निर्मित किए गए है जो कार्यालयी अंग्रेजी वाक्यों का हिन्दी में अनुवाद करते हैं।

इंटरनेट की सर्वजन सुलभता ने मशीन-अनुवाद का एक नया रूप प्रस्तुत किया है। इंटरनेट पर उपलब्ध ऑन-लाइन ट्रांसलेटर सोफ्टवेर कहीं भी, किसी भी इंटरनेट समर्थित मशीन में अनुवाद की सुविधा उपलब्ध कराता है। गूगल द्वारा समर्थित अनुवाद विश्व की कई मुख्य भाषाओं के साथ भारतीय भाषाओं में भी अनुवाद की सुविधा प्रदान करता है। यह इंटरनेट साइट पर स्थित समस्त वेब पेज को अनूदित करता है। यद्यपि मशीन-अनुवाद की सीमाएँ यहाँ पर भी दिखाई देती है।

2.7 अनुवादक की भूमिका

अनुवाद में अनुवादक की भूमिका महत्वपूर्ण है। वह स्रोत भाषा के पाठ का लक्ष्य भाषा में मात्र पाठांतर ही नहीं करता है, वरन् मूल पाठ के भाव को लक्ष्य भाषा में पुनः उत्पादित भी करता है। इसी महत्वपूर्ण भूमिका ने अनुवादक को एक सर्जक

का स्थान दिया है और अनुवाद को मूल साहित्य रचना के समान ही कला की संज्ञा दी है। यद्यपि उत्तर-आधुनिकता के आगमन से पूर्व अनुवादक को साहित्यकार जितना सम्मान नहीं मिलता था। अनुवादक को एक साहित्यकार की तुलना में कम धनराशि के पुरस्कारों द्वारा सम्मानित किया जाता रहा है।

अनुवादक की भूमिका के निम्नलिखित आधार माने जा सकते हैं :

2.7.1 स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा का प्रावीण्य

जहाँ मूल साहित्यकार को अपनी भाषा में प्रवीण होना पर्याप्त है वहीं अच्छे अनुवादक का स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा - दोनों पर प्रावीण्य होना चाहिए। अनुवादक के पास अलग-अलग विषय का अनुवाद कार्य आता है। इसलिए उसे संबंधित विषय का ज्ञान होना अनिवार्य है। ज्ञानमूलक साहित्य के अनुवाद में संबंधित विषय-ज्ञान की अनिवार्यता और भी बढ़ जाती है। इस प्रकार अनुवाद काफी कठिन कार्य है।

2.7.2 पाठ-चयन की प्रकृति

अनुवादक को पाठ चयन में सावधानी रखनी चाहिए इसके अभाव में अच्छा अनुवाद नहीं हो सकता। अनुवादक का स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा पर प्रावीण्य होने पर भी मूल पाठ के विषय-ज्ञान के अभाव में वह अच्छा अनुवाद नहीं कर सकता। साहित्यिक कृति के अनुवाद में रंगमंच से निकट का परिचय रखने वाला व्यक्ति नाटक का अथवा कवि हृदय रखने वाला व्यक्ति कविता का अच्छा अनुवाद कर सकता है। ज्ञानमूलक साहित्य के क्षेत्र जैसे विधि आदि का अच्छा अनुवाद उससे जुड़े हुए अनुवादकों द्वारा ही संभव हो सकता है। जहाँ प्रत्येक शब्द का अपना अर्थ और महत्व होता है, वहाँ अनुवाद करते समय अनुवादक के सामान्य दोष से भी अर्थ का अनर्थ हो सकता है। यही कारण है कि संसद द्वारा पारित विधेयक को राष्ट्रपति अपनी सत्ता से हिंदी में अनूदित करवाकर भारत के राजपत्र में प्रकाशित करवाते हैं तथापि हिन्दी संस्करण में भाषायी अस्पष्टता के समय विधेयक का अंग्रेजी संस्करण

ही मान्य रखा जाता है। उच्चतम न्यायालय में भारत के संविधान का मात्र अंग्रेजी रूप ही मान्य होने के पीछे भी यही कारण आधारभूत है। (यहाँ यह प्रश्न भी उठता है कि भाषायी अस्पष्टता की स्थिति में अंग्रेजी के पाठ को सही मानना और हिन्दी के पाठ को न मानना अथवा हिन्दी के पाठ पर अंग्रेजी को वरियता देना स्वतंत्र भारत में कहाँ तक उचित है? हालाँकि इस प्रश्न का यहाँ इस मुद्दे से संबंध नहीं है।) राष्ट्रीय स्तर पर प्रतियोगिता परीक्षाओं में हिन्दी माध्यम को स्वीकृति मिली हुई है लेकिन पाठ के हिन्दी और अंग्रेजी संस्करण में भिन्नता होने पर मूल पाठ के अंग्रेजी संस्करण को ही प्रामाणिक माना जाता है।

2.7.3 राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक विचारधारा

अनुवादक मूल पाठ के भाव को लक्ष्य भाषा में पुनः उत्पादित करता है। भाव-बोधन और भाव के पुनः उत्पादन की इस प्रक्रिया में कई बार अनुवादक के अपने राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक आदि मत और विचारधाराएँ प्रभावित करती है। अतः अनुवाद की प्रक्रिया के दौरान स्वयं अनुवादक को भाव निरपेक्ष रहने की आवश्यकता होती है, किंतु यह इतना सरल नहीं है। इस संदर्भ में अंग्रेजी शब्द 'secularism' को देखा जा सकता है जो 'धर्म-विहीन' की अपेक्षा 'धर्मनिरपेक्ष' के अर्थ में 'सर्व-धर्म समभाव' के भाव को अभिव्यक्ति देता है। अनुवादक को अनुवाद करते समय अपनी मान्यताओं और विश्वास को स्वयं पर प्रभावी होने से रोकना चाहिए।

2.7.4 आंचलिक प्रभाव

आंचलिक प्रभाव से तात्पर्य है - स्थानीय प्रभाव। जब कोई पाठ स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में पुनः उत्पादित किया जाता है तब उस पाठ पर स्वाभाविक-अस्वाभाविक रूप से आंचलिक प्रभाव भी पड़ता है। बरतन माँजने के विविध प्रकार के साबुन के विज्ञापनों को उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है, जहाँ भौगोलिक क्षेत्र बदलने के साथ विज्ञापन में बेचने वाले (पात्र) की भाषा के साथ-साथ उसका पहनावा,

विशिष्ट अभिव्यक्तियाँ एवं तौर-तरीका भी बदल जाता है। इससे पता चलता है कि किस प्रकार जब स्रोत भाषा का मूल पाठ लक्ष्य भाषा में स्थानांतरित होता है, तो उसके साथ सिर्फ मूल पाठ ही नहीं, बल्कि एक सामाजिक-सांस्कृतिक सोच भी अनूदित पाठ में स्थानांतरित होती है।

2.8 अनुवादक के उपकरण

साहित्यकार अपनी कल्पना और भाषा शक्ति से कृति की रचना करता है किंतु अनुवाद कार्य इतने से संपन्न नहीं हो सकता। अनुवाद करने के लिए अनुवादक को दोहरी प्रक्रिया का अनुसरण करना पड़ता है जिसमें विविध बाह्य उपकरणों की आवश्यकता होती है। यहाँ अनुवाद में उपयोगी उन उपकरणों पर विचार करना उपयोगी होगा।

2.8.1 स्वयं लेखक और अनुवादक

स्वयं लेखक और अनुवादक कार्य संपन्न करने वाले व्यक्ति हैं न कि उपकरण। किंतु यहाँ उन्हें उपकरण के रूप में इसलिए स्थान दिया गया है क्योंकि लेखक के पाठ के बिना अनुवाद करना संभव नहीं है और अनुवादक के बिना तो अनुवाद संभव हो ही नहीं सकता। इसलिए इन दोनों को अनुवाद प्रक्रिया के दो अनिवार्य अंग कहा जाता है।

2.8.2 भाषा-संस्कृति का ज्ञाता

स्रोत भाषा की पाठ सामग्री का लक्ष्य भाषा में सही अनुवाद करने के लिए भाषिक संस्कृति का ज्ञान होना आवश्यक है। स्रोत भाषा की अपनी विशेष प्रकृति अर्थात् सांस्कृतिक परिवेश होता है और इसी प्रकार लक्ष्य भाषा का अपना एक अलग सांस्कृतिक परिवेश होता है। इन दोनों की जानकारी अनुवादक के लिए आवश्यक बन जाती है।

2.8.3 शब्दकोश

अनुवाद में स्रोत भाषा के पाठ का संप्रेषण लक्ष्य भाषा में समतुल्य शब्दों के द्वारा किया जाता है। यह आवश्यक नहीं कि अनुवादक की जितनी योग्यता अपनी मातृ भाषा में होती है उतनी ही योग्यता दूसरी भाषा में भी हो। अतः स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद करते समय समतुल्य शब्द की जानकारी हेतु शब्दकोश का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है। अनुवाद में स्रोत भाषा के पाठ का लक्ष्य भाषा में पुनः उत्पादन किया जाता है। भाव के पुनः उत्पादन की इस प्रक्रिया में स्रोत भाषा के शब्दों के लिए लक्ष्य भाषा में उपलब्ध सभी पर्यायवाची शब्दों को प्राप्त कर उनमें सें किसी एक समतुल्य शब्द का चयन किया जाता है। इस कार्य के लिए भी शब्दकोश का उपयोग करना महत्वपूर्ण हो जाता है। अनुवादक अपने संशय को दूर करने के लिए एक-भाषिक अथवा द्वि-भाषिक अथवा बहु-भाषिक शब्द-कोश की सहायता ले सकता है। शब्दकोश के अतिरिक्त मुहावरा कोश, लोकोक्ति कोश, व्याख्या कोश आदि भी अनुवादक को उपयोगी होते हैं।

2.8.4 व्युत्पत्ति कोश

अनुवाद में भाषा का पुनः उत्पादन करते समय शब्दों के व्युत्पत्तिमूलक अर्थ ढूँढने की आवश्यकता पड़ती है। मूल धातु के आधार पर शब्दों का अर्थ ग्रहण किया जा सकता है जिससे सही समतुल्य शब्द प्राप्त किए जा सकते हैं। जैसे 'रमणीय' शब्द की व्युत्पत्ति 'रम्' धातु से हुई है। 'रम्' का अर्थ है, विचरण या विहार। अतः व्युत्पत्ति के आधार पर 'रमणीय' शब्द का अर्थ - 'विहार या विचरण करने योग्य' प्राप्त किया जा सकता है।

2.8.5 विश्व कोश

स्रोत भाषा की सामाजिक-सांस्कृतिक अवधारणाओं से जुड़े शब्दों का लक्ष्य भाषा में समतुल्य प्राप्त करना बहुत कठिन है। ऐसी स्थिति में अनुवादक विश्व कोश की

सहायता ले सकता है। क्योंकि विश्व कोश संबंधित पदार्थ की समस्त विशेषताओं का न केवल उल्लेख करता है, वरन् कई बार उसका चित्र भी प्रस्तुत करता है। इससे अनुवादक को पदार्थ की पूरी जानकारी प्राप्त हो जाती है और वह लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के शब्द का समतुल्य सरलता से प्राप्त कर सकता है। उदाहरणार्थ हिन्दी के 'रोटी' शब्द का अंग्रेजी में अनुवाद करना दुष्कर कार्य है, इसके लिए अंग्रेजी में प्रस्तुत ब्रेड, थिनब्रेड, बेक्ड ब्रेड, ऑन आइरन शीट जैसे शब्द 'रोटी' के सही अर्थ को संप्रेषित नहीं कर सकते। यही कारण है कि कर्म, पंडित, घी, जनेऊ, गोदान, कच्चा-पक्का जैसे कई हिन्दी शब्दों को अंग्रेजी शब्द कोश में ज्यों का त्यों ले लिया गया है।

2.8.6 तकनीकी शब्दावली

विज्ञान और तकनीकी में विकास होने के साथ-साथ नए शब्द मनुष्य के अनुभव क्षेत्र में आने लगे। 'मुद्रा' शब्द का नृत्य कला में जो अर्थ होता है वह अर्थ अर्थशास्त्र में नहीं होता। भारतीय रिजर्व बैंक द्‌वारा तैयार की गई बैंकिंग शब्दावली में 'मुद्रा' को 'धन' या 'नकद' के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। अतः क्षेत्र विशेष की सामग्री का अनुवाद करने के लिए तकनीकी शब्दावली से सहायता मिलती है। इस प्रकार की शब्दावली संबंधित विषय के विद्‌वानों द्‌वारा या ऐसे कार्य के लिए निर्मित आयोग द्‌वारा तैयार करवाई जाती है। इस प्रकार साहित्येतर अनुवाद में किसी शब्द का संदर्भ बदलने से शब्द का अर्थ भी बदल जाता है। इसीलिए विज्ञान आदि ज्ञान के क्षेत्र में तैयार की गई पारिभाषिक शब्दावली को अनुवाद का महत्वपूर्ण उपकरण माना जाता है।

2.8.7 कंप्यूटर और इंटरनेट

वर्तमान समय में अनुवाद के लिए ऐसे सोफ्टवेर उपलब्ध हो रहे हैं जिससे अनुवादक को सहायता मिलती है। शब्दकोश, विश्वकोश, तकनीकी शब्दावली को सोफ्टवेर के रूप में कम्प्यूटर में डालकर एक साथ उपयोग में लाया जा सकता। इस

प्रकार के कोश के उपयोग का सबसे बड़ा लाभ यह है कि शब्द विशेष की खोज के पीछे नष्ट होने वाले समय को बचाया जा सकता है। भारी-भरकम कोशों को उठाने और एक-स्थान से दूसरे स्थान पर लाने-ले जाने के कष्ट से भी बचा जा सकता है। किफायती दाम में उपलब्ध इन सुविधाओं को ध्यान में रखकर 24 बड़े ग्रंथों में उपलब्ध 'इन्साइक्लोपिडिया ब्रिटेनिका' का मुद्रण 2012 से बंध करके डिजिटल रूप में उसे उपलब्ध कराने का निर्णय लिया गया।

उपर्युक्त सारी सुविधाएँ इंटरनेट के माध्यम से भी प्राप्त की जा सकती है। कई वेब साइटें ऐसी है जो ऑन-लाइन अनुवाद उपलब्ध करती है। गूगल संपूर्ण वेब पेज का अपनी भाषा में अनुवाद उपलब्ध कराता है। यद्यपि इन अनुवादों में कई त्रुटियाँ रहना स्वाभाविक है फिर भी निरंतर संवर्धित होकर बेहतर आउट-पुट दे रहे गूगल अनुवादक के महत्व को नजरंदाज नहीं किया जा सकता।

2.9 अनुवाद की सीमाएँ

वर्तमान समय में अनुवाद का महत्व जितना बढ़ा है उतना ही स्पष्ट रूप से यह सिद्धांत भी मान्य हुआ है कि स्रोत भाषा का कोई भी पाठ पूरी तरह से लक्ष्य भाषा में अनूदित नहीं हो सकता। स्रोत भाषा के पाठ के साथ जुड़ी विशिष्ट शब्दावली, वाक्य रचना, मुहावरे, शब्द-शक्तियाँ आदि की विशेषताओं को ज्यों का त्यों लक्ष्य भाषा में नहीं लाया जा सकता। भाषाविज्ञान के सिद्धांत तो यहाँ तक कहते हैं कि किसी एक भाषा में भी दो समानार्थी शब्द नहीं होते तो फिर लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के समान शब्द मिलने का प्रश्न ही नहीं उठता।

स्रोत भाषा के पाठ के साथ उसकी सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि गहरे रूप से जुड़ी रहती है। जब तक इन विशिष्ट संदर्भों की जड़ो तक नहीं पहुँचा जाएगा तब तक इनका अनुवाद करना संभव नहीं है। हिन्दी साहित्य की वह कृतियाँ जिसमें ग्रामीण एवं आंचलिक परिवेश अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक अर्थ-छवियाँ लेकर प्रस्तुत हुई हैं,

उनका किसी भी भाषा में अनुवाद करना मुश्किल है। फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आंचल' की पृष्ठभूमि इतनी विशिष्ट है कि उसकी विशेषताओं को बनाए रखते हुए भाव का पुनः उत्पादन शायद ही किया जा सकता है।

अनुवाद की सीमा कविता के अनुवाद में और अधिक स्पष्ट रूप से सामने आती है जब कवि द्वारा प्रयुक्त बिंब, प्रतीक, अलंकार, मिथक आदि विशिष्ट अभिव्यक्तियों को छंदबद्धता अथवा कविता की लय के साथ लक्ष्य भाषा में संप्रेषित करने की स्थिति आती है।

इस प्रकार भाषाई संरचना, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, बाज़ार आदि से जुड़े अन्य संदर्भों की दृष्टि से अनुवाद कार्य में संप्रेषण की प्रक्रिया विभिन्न समस्याओं को उपस्थित करती है। इन समस्याओं का विस्तृत अध्ययन अध्याय चार के अंतर्गत किया गया है।